अमृत विचार

लोक दर्पण

रविवार, 24 मार्च 2024

www.amritvichar.com

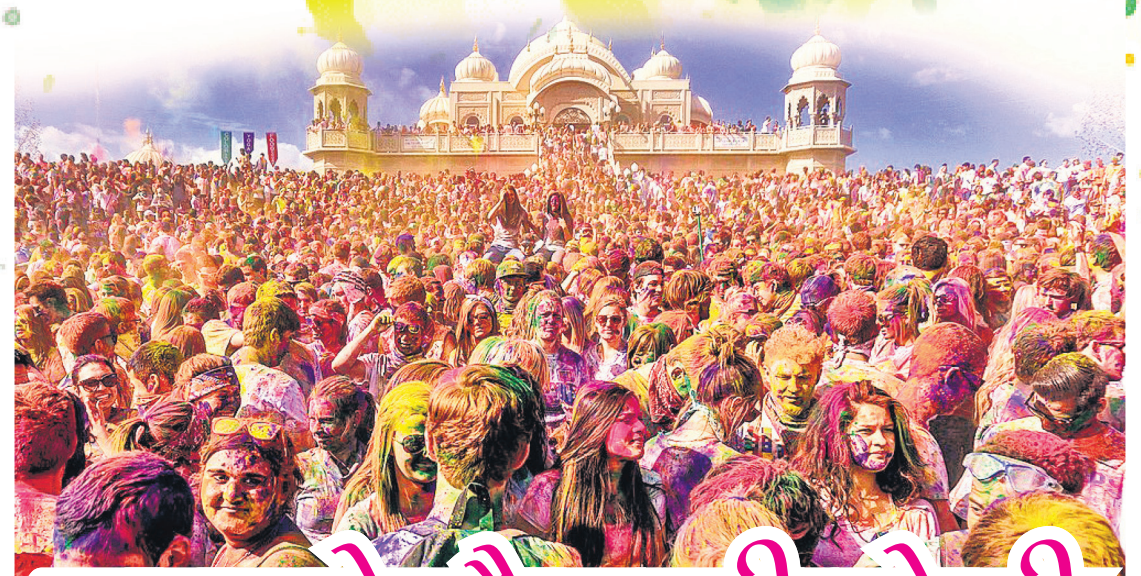

बदलते दौर की होली

बदलते दौर में फागुन का अंदाज भी बदला है। पहले वसंत की अंगड़ाई, जहां-तहां खिलने वाले फूल और पछुआ की सरसराहट से फागुन की आहट मिलने लगती थी, लेकिन आधुनिकता की इस दौड़ में हमारी परंपराएं सिसकने लगी हैं। फागुन के महीने में फाग गाने और ढोलक की थाप सुनने को कान तरस गए हैं। फाग का सदियों पुराना राग शहरों में ही नहीं, गांवों की चौपालों से भी गुम हो गया है। न जाने कहां गए हरि और न जाने कहां गया फाग...सारे गाए-बजाए जाने वाले ढोल, मजीरें, झांझ, धमाए, चैती और ठुमरी, लोकगीत, लोकउत्सव और पारंपरिक संगीत धीरे-धीरे हमारी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और चेतना से लुप्त होते जा रहे हैं।

मीता गुप्ता
प्रवक्ता, केवि, पूरे, बरेली

अब कोई नहीं कहता-रंग भरी राग भरी रागसूं भरी री।/होली खेल्यां स्याम संग रंग सूं भरी री।। आज के दौर में होली कुछ-कुछ फिल्मी और कुछ व्यावसायिक रंग में रंगी नजर आती है। विशेषतः महानगरों या विदेशों में बसे भारतीयों तथा मल्टीनेशनल कंपनियों में काम करने वालों के लिए उत्सव की यह परंपरा लगभग सिमटती जा रही है। इससे नई पीढ़ी अपनी परंपराओं और जमीन से कटती जा रही है। अपनी संस्कृति को बचाए रखने में सदैव से उत्सवों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। कमर्शियल होना, प्रोफेशनल होना, अप्रवासी होना जितना जरूरी है, उतना ही जरूरी है, नई पीढ़ी को संस्कारों,संस्कृति और जीवन मूल्यों से जोड़ना।

चोवा चंदण अरगजा म्हा, केसर णो गागर भरी री।/मीरां दासी गिरधर नागर, चेरी चरण धरी री। चंदन, गुलाब जल, टेसू के फूलों से तथा प्राकृतिक रंगों से होली खेलने की परंपरा लगभग खत्म हो गई है। इनकी जगह रासायनिक रंगों का प्रयोग होने लगा है,जो शरीर और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। एकल परिवारों का प्रचलन बढ़ने के कारण मिलने-मिलाने,पारिवारिक स्नेह मिलन,दावतें, मिठाइयों की परंपरा लुप्त हो रही है। बंद घरों में टीवी के सामने ठुमके लगातीं अभिनेत्रियों और अभिनेताओं की होली देखकर हम धन्य हो रहे हैं। समय के साथ जब सारे संदर्भ बदल रहे हैं तो होली जैसे उत्सव के भी संदर्भ बदल रहे हैं। मनोरंजन के अन्य साधनों के चलते लोगों की परंपरागत लोक त्योहारों के प्रति रुचि कम हुई है। इसका कारण लोगों के पास समय कम होना है। अब तो होली की मस्ती एक-दो दिन भी नहीं रही। मात्र आधे दिन में यह त्योहार सिमट गया है। रंग-गुलाल लगाया और हो गई होली। जैसे-जैसे परंपराएं बदल रही हैं, रिश्तों की मिठास खत्म होती जा रही है।

फाल्गुन की मस्ती का नजारा अब गुजरे जमाने की बात हो गई है। कुछ सालों से फीके पड़ते होली के रंग अब उदास कर रहे हैं। शहर के बुजुर्गों का कहना है कि ' न हंसी- ठिठोली, न हुड़दंग, न रंग, न थाप और न भंग' ऐसा क्या फागुन? न पानी से भरी 'खेली' और न ही होली आई रे...का शोर। अब कुछ नहीं, कुछ घंटों की रंग-गुलाल के बाद सब कुछ शांत। होली की मस्ती में अब वो रंग नहीं रहे। आओ राधे खेला फाग होली आई। तांबा पीतल का मटका भरवा दो सोना रुपाली लाओ पिचकारी के स्वर धीरे धीरे धीमे हो गए हैं।

होली के दिन खान-पान में भी अब अंतर आ गया है। गुझिया, पूड़ी-कचौड़ी, आलू दम, महजूम (खोवा) आदि मात्र औपचारिकता रह गई है। अब तो होली के दिन भी मेहमानों को कोल्ड ड्रिंक्स और फास्ट फूड जैसी चीजों को परोसा जाने लगा है। होली के मौके पर बनने वाली ठंडाई और भांग की जगह अब अंग्रेजी शराब ने ली है। चारो ओर बाजारवाद हावी होता जा रहा है। वहीं होलिका के चारों तरफ सात फेरे लेकर अपने घर के सुख शांति की कामना करना,वो गोबर के विभिन्न आकृति के उपले बनाना,दादी-नानी का मखाने वाली माला बनाना, रंग-बिरंगे ड्रेस में अपनी सखी-सहेलियों संग घर-घर मिठाई बांटना, गेहूं के पौधे भूनना,अब यह सब परंपराएं तो मानो नाम की ही रह गए हैं। पहले पूरा दिन घरों में पकवान बनते थे और मेहमानों की आवभगत होती थी। अब तो सबकुछ बस घरों में ही सिमट कर रह गया है। आजकल तो मानों रिश्तों में मेल-मिलाप की कोई जगह ही नहीं रह गई हो। मन आया तो औपचारिकता में फोन पर हैप्पी होली कहकर इतिश्री कर लिए। कुछ हुड़दंगी लड़के मोटरसाइकिल का साइलेंसर निकाल कर भड़भड़ाते-गुर्राते से हर शहर में देखे जा सकते हैं। क्या यही होली है? अब हालात यह हैं कि होली के दिन बहुत से लोग खुद को कमरे में बंद कर लेते हैं।

हमारे देश में हर माह,हर ऋतु किसी न किसी त्योहार के आने का संदेश लेकर आती है और आए भी क्यों न, हमारे ये त्योहार हमें जीवंत बनाते हैं, ऊर्जा का संचार करते हैं, उदास मनों में आशा जागृत करते हैं। अकेलेपन के बोझ को थोड़ी देर के लिए ही सही,कम करके साथ के सलोने अहसास से परिपूर्ण करते हैं, यह उत्सवधर्मिता ही तो है,जो हमारे देश को अन्य की तुलना में एक अलग पहचान, अस्मिता प्रदान करती है। होली पर समाज में बढ़ते द्वेष, स्वार्थ और असामाजिक-असांस्कृतिक भावना को कम करने के लिए मानवीय व आधारभूत अनिवार्यता की दृष्टि से देखना होगा।

खुशियों का पर्व होली

होली का त्योहार आते ही मन उत्साह से भर उठता है। यह त्योहार है ही ऐसा कि पूरा समाज सारे भेदभाव छोड़कर एक साथ मिलकर मनाता है। होली रंगों का त्योहार होने के कारण सभी व्यक्ति ऐसे रंगों में रंगे होते हैं कि किसी व्यक्ति विशेष की पहचान समाप्त हो जाती है। यह सुंदर रंग समाज को महत्वपूर्ण संदेश देते हैं। सुंदर रंगों को दूसरों पर उड़ेलने या लगाने का मतलब है कि हमारे साथ-साथ दूसरों के जीवन में भी सुंदरता बनी रहे,हम प्रसन्न रहें और दूसरों को खुशी दें। इस त्योहार की खास बात यही है कि हम अपने सब जातिगत या छोटे-बड़े का भेदभाव मिटाकर पूरे उल्लास के साथ यह त्योहार मनाते हैं तथा सामाजिक समानता का संदेश देते हैं। सभी एक दूसरे के साथ खुशियां तथा अपनापन बांटते हैं। इस त्योहार में हर व्यक्ति अपने तरीके से अपने अंदर के उत्साह को उजागर करता है। कोई तरह-तरह के पकवान बनाकर, कोई नए वस्त्र पहन तथा सज-धज कर, कोई अपने प्रियजनों को उपहार देकर तो कोई गरीबों व असहायों की मदद करके। हमारे देश में विभिन्न क्षेत्रों में होली मनाने के तरीके अलग-अलग जरूर हैं,पर उद्देश्य सबका एक ही है' समानता व एकता। होली के 'शुभ अवसर पर एक दूसरे के गले मिलने का मतलब यही है कि आपस के सभी मनमुटाव भुलाकर भाईचारे का व्यवहार करें तथा मन व विचारों को स्वच्छ व कलुषता रहित बनाएं।

वीना सिंह
लखनऊ

होली के पर्व के साथ एक पौराणिक कथा भी जुड़ी हुई है। प्राचीन काल में हिरण्यकशिपु नाम का एक राक्षस था। वह भगवान विष्णु को अपना शत्रु मानता था,परंतु उसका पुत्र प्रहलाद विष्णु का अनन्य भक्त था। हिरण्यकशिपु ने प्रहलाद को बहुत समझाया कि वह विष्णु की भक्ति न करे,पर प्रहलाद नहीं माना। तब क्रोध में आकर हिरण्यकशिपु ने अपनी बहन होलिका को, प्रहलाद को अग्नि में भस्म करने को कहा। होलिका को अग्नि में न जलने का वरदान था,लेकिन बुरा काम करने पर वरदान काम नहीं आया। होलिका तो जल गई पर प्रहलाद का बाल भी बांका नहीं हुआ। हिरण्यकशिपु जब स्वयं उसे मारने दौड़ा तो नरसिंह भगवान ने प्रकट होकर राक्षस को मार डाला और प्रहलाद की रक्षा की।

होलिका दहन के पीछे के संदेश को याद करके सभी व्यक्ति समाज में फैली बुराइयों को समाप्त करने का प्रण लेते हैं। होली के त्योहार की तैयारियां लोग कई महीने पहले ही शुरू कर देते हैं। अपने घर तथा आसपास के क्षेत्र को साफ करके दीवालों पर रंग-रोगन के साथ सुंदर छायाकृति बनाकर सुंदरता को दोगुना तो करते ही है,साथ ही अपनी अद्भुत कला का भी प्रदर्शन करते हैं। स्वच्छ वातावरण में यज्ञ-हवन,पूजा-पाठ आदि करके मन-तन तथा स्थान को शुद्ध करते हैं। होली के समय शीत कम हो जाती है। प्रकृति में चारों ओर नवीनता सी फैल जाती है। पतझड़ के बाद पेड़ों में नई कोपलें फूटनें लगती हैं। नई फसलें पकने लगती हैं, घरों में नया अन्न आ जाता है। इस नए अन्न को जिसे होलिका दहन की आग में भून का प्रसाद के रूप में ग्रहण करते हैं।

होलिका दहन के दूसरे दिन एक दूसरे पर रंग डालने की प्रथा है। पहले लोग टेसू के फूलों का रंग डालते थे,जो त्वचा को रोगों से बचाता था। ऋतु परिवर्तन के समय त्वचा रोग होने की संभावना बढ़ जाती है। इसलिए प्राकृतिक रंगों जैसे- हल्दी, चंदन, हरसिंगार के फूल और अच्छे गुलाल का प्रयोग करते थे। वर्तमान समय में होली मनाए जाने में कई तरह की विकृतियों का समावेश हो गया जैसे- हानिकारक रंगों का इस्तेमाल करना, व्यंजनों में नशीला पदार्थ मिलाना,तेज आवाज में फिल्मी गानें सुनना,शराब पीना, अश्लीलता का प्रदर्शन करना आदि। होली के हुड़दंग में लोंगों के कपड़े फाड़ना उन्हें कीचड़ में गिराना व कीचड़ से नहलाना एक आम बात हो गई है,जबकि यह एक अशोभनीय व्यवहार है जिसे कोई भी पसंद नहीं करता। फिर भी "बुरा न मानों होली है'' कहकर उसे बढ़ावा देते हैं। होली के हुड़दंगों का फायदा उठाकर समाज में खुलेआम अमानवीय व शर्मनाक घटनाएं होती हैं। यह सब कृत्य होली के त्योहार पर लगे वे दाग हैं,जो कभी नहीं छूटते। होली के त्योहार पर हम सबका दायित्व है कि होली के रंगों को बदरंग न किया जाए। ऐसे होली के रंग बिखेरे जाएं जिसमें हमारा समाज विभिन्न रंगों से सुशोभित हो। सभी का जीवन उत्साह और उमंग से भर जाए। अतः इस त्योहार के वास्तविक उद्देश्य को ध्यान में रखकर आपसी वैमनस्यता को त्यागकर, सारे द्वेष, बैर-भाव भुलाकर साफ मन से यह रंग-रंगीला त्योहार मनाएं। अपने परिवार तथा आसपास का वातावरण इतना उल्लासमय बनाएं कि नीरस मन भी उत्साह से भर उठें। होली खुशियों का त्योहार है तो खुश होकर मनाएं।

फागुन, होरी के खिलैया यार, जाय मत रे!

होली शास्त्र में भी है, किंतु उसका स्रोत लोक जीवन है। बहुत ध्यान से समझने की बात है-'भारत में नाना संस्कृतियों का संगम' शीर्षक निबंध में आचार्य क्षितिमोहन सेन ने लिखा है कि-'होलिकादाह के लिए आग अनेक स्थानों पर अंत्यज (महारों) के घर से लाई जाती है।' होली पर शास्त्र ने श्वपच स्पर्श का विधान किया है। इतना ही नहीं, होलिका दहन के लिए जो अंगार आएगा,वह डोम के यहां से लाया जाएगा। होली एक ऋतु उत्सव है, इसमें कोई संदेह नहीं।

संसार के विभिन्न देशों के ऋतु उत्सवों को लेकर मानवशास्त्रियों ने अध्ययन किए हैं। वसंत के त्योहार विभिन्न देशों में आनंद भाव से मनाए जाते हैं। प्रकृति में परिवर्तन हुआ तो मनुष्य के मन में भी परिवर्तन हुआ। प्रकृति में उल्लास बिखरा तो मनुष्य के मन में भी उल्लास बिखरा। यह प्रकृति और मन के गहरे संबंध का रहस्य है। होली के साथ वसंत का वैभव जुड़ा हुआ है। वसंत ऋतु को लेकर जो साहित्य रचा गया है,उसे होली से अलग नहीं किया जा सकता। वास्तव में तो वह होली की पृष्ठभूमि है।

तांत्रिक परंपरा में होली दारुणरात्रि के रूप में उपासना का पर्व है। तांत्रिक परंपरा में उपासना की चार रात्रियों का उल्लेख हुआ है-प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रय विभाविनी। कालरात्रिः महारात्रिः मोहरात्रिश्च दारुणा। कालरात्रि शिवरात्रि, मोहरात्रि शरदपूर्णिमा की रास की रात्रि, महारात्रि दीपावली और दारुणरात्रि होली की रात महामहोपाध्याय गिरिधर शर्मा जी ने उल्लेख किया है कि मीमांसा के भाष्यकार शबर स्वामी ने सदाचार के प्रसंग में होली के उदाहरण दिए हैं।

डॉ. राजेंद्र रंजन चतुर्वेदी
सेवानिवृत्त प्रोफेसर

शैवागम से संबंधित एक ग्रंथ 'वर्ष क्रियाकौमुदी' में मदनमहोत्सव के अंतर्गत प्रातः काल से एक प्रहर तक संगीत और वाद्य के साथ शृंगारिक अपशब्दों को बोलते हुए कीच उछालने का उल्लेख हुआ है। हर्षदेव की रत्नावलि में उल्लेख है कि इस उत्सव में चित्र बनाकर कामदेव की पूजा होती थी। 'रत्नावलि' में विदूषक कहता है कि कामिनियां रंग डाल रही हैं और पुरुष नाच रहे हैं, जब राजा प्रमदवन में कामदेव की पूजा के लिए जाता है तो विदूषक फिर कहता है कि देखो, एक उत्सव में से दूसरा उत्सव निकल रहा है। सद्यः सान्द्र विमर्द कर्दम कृतः क्रीडे क्षणं प्रांगणे! दशकुमार चरित में कलिंगराज कर्दम के तेरह दिन तक चलने वाले वसंतोत्सव का उल्लेख है। भविष्यपुराण में कामदेव और रति की मूर्तियां बनवाकर पूजने का विधान है। कामसूत्र ने इसे 'सुवसंतक-उत्सव' बताया है जिसमें युवतियां कानों में आम्रमंजरी लगाकर वसंत का स्वागत करती थीं तथा 'सींग की पिचकारी' से किंशुक जल छिड़का जाता था। बौद्धसाहित्य की 'कृपण-कोसीय जातककथा' में राजगृह का एक भिक्षु होली के दिन पूआ खा रहा था,तब कोटिपति सेठ के मन में भी पूआ खाने की लालसा उत्पन्न होने का उल्लेख है। होली की मनोभूमि राग की मनोभूमि है,वह मनोभूमि जिससे कलाओं का उद्भव होता है। लाल-पीला-हरा-नारंगी-नीला और गुलाबी। जैसे होली के रंग अनेक हैं,वैसे ही होली के बोल भी अनेक हैं। होली के संगीत का अध्ययन अनुसंधान का विषय बनाया जा सकता है। होली के गीतों की कितनी विधाएं और शैलियां हैं। ध्रुपद धमार रसिया चांचर तान राग काफी दीपचंदी ताल। धमार का होली के अवसर पर कितने वाद्य बजाए जाते हैं? ढप , ढोलक, मजीरे, नगाड़े, बैन, मुंहचंग, किन्नर,महुआ,हुड़का। गोप-ग्वालों के मृदंग-पखावज और ढप हों अथवा विंध्याचल के जंगलों में अपने आदिम विश्वासों और अनेक अभावों के बीच जीने वाले मुस्कराते-गाते भील-भीलनियों के धिन्न-धिन्न करते हुए मादल और ढोल हों, प्रत्येक ताल और लय में वही शाश्वत तरंग है। होली पर कितने प्रकार के नृत्य होते हैं? थावल- चौंडनी हो, शेखावाटी का गींदड या भीलवाड़ा का गेर हो।

ब्रज का चरकुला हो। करमा नाच, लहराओबा नृत्य, वसंत की मदमाती बयार में चांदनी के दूध में नहाए युवा-हृदय की सौन्दर्य चेतना उमंगती है तो पैर अपने-आप थिरकने लगते हैं। होली के पास वह आनंद भाव है जिसमें मन का साधारणीकरण हो जाता है, चित्त द्रवीभूत हो जाता है। सुख की अदम्य खोज, प्रणय और सौंदर्य की अतृप्त प्यास, मन की उद्दाम तरंग, जब होली के दिन बीतने को होते हैं तब रसिक मन की प्यास बुझती नहीं, वह कहता है- फागुन, होरी के खिलैया यार, जाय मत रे!

स्वाधीनता आंदोलन में होली गीत

लोकमानस में गीत उसके सुख-दुःख, संघर्ष-आनंद, हास-परिहास और उलहानों के सहचर होते हैं। काल के कलरव में भावों की अभिव्यक्ति लोकगीतों के रूप में साथ निभाती है। संसार की सभी संस्कृतियों में लोकगीतों का अपना विशिष्ट स्थान है। इनमें उनकी सामाजिक चेतना, लोक संस्कृति, लोक विचार और अनुभूतियां स्वर पाते हैं। आमजन के बीच जन्म से लेकर मृत्यु तक के संपूर्ण विस्तार तक इन गीतों का विस्तार होता है। बालक के जन्म के समय सोहर, विवाह पर बन्ना और बन्नी,वर्षा ऋतु में कजरी,फागुन में फाग और चैता गाकर महिलाएं अपने हालात और पीड़ाओं को अभिव्यक्ति देती हैं। निर्गुण गाकर जनमानस जीवन को आध्यात्मिकता से सराबोर कर देता है। होली के अवसर पर उत्तर भारत में विशेष रूप से रसिया, फाग, धमार और स्वांग आदि न जाने कितनी गायन परंपराएं अपना रंग घोलती रही हैं। इन लोकगीतों के कथ्य में काल के अनुरूप परिवर्तन होता रहा है।

डॉ. प्रशांत अग्निहोत्री
निदेशक, रुहेलखंड शोध संस्थान, शाहजहांपुर

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में जब देश का जनमानस विद्रोह कर रहा था तब इन गीतों में भी देश की आजादी,वीर सपूतों की वीरताओं का वर्णन और तात्कालिक विषम परिस्थितियां अभिव्यक्त होती रहीं। जहां एक ओर लोक कवियों के लोकगीत स्वाधीनता संग्राम से प्रभावित हुए तो वहीं दूसरी ओर इन लोकगीतों ने स्वाधीनता संग्राम को भी प्रभावित किया। देश की सभी भाषाओं में स्वाधीनता की भावना से ओत-प्रोत लोकगीतों की भरमार है। उस दौर में महिलाएं स्वाधीनता आंदोलन की घटनाओं और वीर पुरुषों पर आधारित लोकगीतों को अपनी बोलियों में मांगलिक अवसरों पर भी गाती थीं। अट्ठारह सौ सत्तावन के प्रथम स्वाधीनता संग्राम से लेकर आधुनिक स्वाधीनता आंदोलन तक शोषक और आतताई ब्रिटिश शासन के विरोध के स्वर फाग, कजरी, आल्हा, बिरहा, रागिनी, मल्हार, लावणी आदि में सुनाई देते थे। हिंदी और उसकी अन्य भाषाओं तथा बोलियों में अनेक फाग और होली गीत गाए गए। सन् 1857 की क्रांति में बाबू कुंवर सिंह, मंगल पांडे आदि देशभक्त वीरों ने क्रांति का नेतृत्व किया। इस क्रांति से जनता बहुत प्रभावित हुई और ये वीर लोक के नायक बन गए। बहुत से लोकगीत इन वीरों की प्रशस्ति में गाए गए। एक भोजपुरी लोकगीत में आज भी लोग होली के अवसर पर कुंवर सिंह को याद करते हैं- बाबू कुंवर सिंह तोहरे राज बिनु, अब न रंगइबो केसरिया। इतते अइले घेरि फिरंगी,उतते कुंवर दुई भइया। गोला-बारूद के चले पिचकारी, बिचवा में होत लड़इया, इतते अइले घेरि फिरंगी, उतते कुंवर दुई भइया। गोला-बारूद के चले पिचकारी, बिचवा में होत लड़इया बाबू कुंवर सिंह तोहरे राज बिनु अब न रंगइबो केसरिया।

वे दूसरे लोकगीत में गाते हैं-बंगला पै उड़ेला अबीर हो लाला, बंगला पै उड़ेला अबीर।/ हो बाबू अहो बाबू कुंवर सिंह तेगवा बहादुर,बंगला पै उड़ेला अबीर।

होली के एक हरियाणवी गीत में परिवार की बेटी को होली के अवसर पर रंग खेलने के लिए आतुर नवाब और अंग्रेज के लड़कों से सुरक्षित रहने की बात कही गई है-होली बी खेले ढपली बजा कैं गलियां में उड़ए गुलाल/कहियो मुरैटण तै होली खैलण आवै नवाब। हंसली घड़ावै फिरंगी को लड़को,कठलो घड़ावै नवाब कहियो मुरैटण तै होली खैलण आवै नवाब।/ ऐसी होली खेलो मिरगनैणी म्हारा साफा के रखियो लाज।।

क्रांतिकारियों रानी लक्ष्मीबाई, भगत सिंह और नेताजी सुभाष चंद्र बोस का यशगान इस होली गीत में किया गया है और इन्हें भारत माता का भाग्य बताया गया है-

भारत के भाग तू,सोता क्यों जाग तू।/भारत की बहादुर बेटी लक्ष्मीबाई झांसी।/उलट-पुलट किया कतल चढ़े फांसी।/ खेले वो फाग तू,भारत के भाग तू।/ इस कोने से उस कोने तक हुई दुनिया में हलचल/ कलकत्ता देखा पेशावर जा लिया,पेशावर टोहा काबुल/ नेता सुभाष तू, भारत के भाग तू।।

सन् 1857 में प्रथम स्वाधीनता समर के असफल हो जाने पर अंग्रेजों ने बर्बर नरसंहार किया था। न जाने कितने गांव उन्होंने जला दिए। लूटपाट की और जाने कितने ही लोगों को सरेआम फांसी पर लटका दिया। उसी बर्बरता का वर्णन पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गाए जाने वाले इस फाग में किया गया है-चूना मूंडन पै बुझवा दये।/ हाथ पांव में कीला ठोंके, पाछे से संदवा दये।/तेरा दिन चार मइना लों, गोंडन खून मिटा दये।/जार दयो है बिला बिलजुरा, लुटो जन भगवा दये।/ अंगरेजन खां बुलाइन ने, बंटाधार करा दये।/खान फकीरे, कॉलों कइये, ऐसे हाल करा दये।

लोक कवि फकीरे खान ने अपने इस लोकगीत में अंग्रेजों की क्रूरता का वर्णन करते हुए लिखा कि, उन्होंने लोगों के सिरों पर चूना बुझवा दिया। हाथ-पैरों में कील ठोककर पीछे से शरीर के टुकड़े करवा दिए। चार महीने और तेरह दिनों तक गोंडों का खून बहाया। बिला बिलखुरा को लूटकर जला दिया और ग्रामीणों को भगा दिया। इन लोगों ने अंग्रेजों को बुलाकर महानाश करवा दिया, उन्होंने कैसी दुर्दशा करवा दी।

ब्रिटिश राज्य के अंतर्गत एक ओर अंग्रेज भारतीय जनता पर अत्याचार कर रहे थे, वहीं दूसरी ओर बहुत से लोग पाश्चात्य जीवनशैली को अपनाते जा रहे थे। एक बघेली लोकगीत में इसी बढ़ते पाश्चात्य चलन का विरोध किया गया है-इन गुंडों ने होरिका रचाये दिहे गा

तुमने पहिरा मोजा पतलून, ऊपर बढ़िया कोट।/पावन पहिरि विलइती जूता, सिरे विलइती टोप।/इन गुंडों ने होरिका रचाये दिहे गा।/एक हाथ मा बढ़िया हंटर, बढ़िया घड़ी कलाई।/मुंह मा सिगरेट धुआं उड़ाई, पाकिट दियासलाई।/ पतरैं पतरैं खाना खावे, पतरैं कपड़ा पहिरैं।/ यंकटनगर के छोटा बाबू, छन ने साहब मेम।/ टॉमी कुत्ता साथ चलै और घड़ी बतावै टेम।/

होरिया रचाये दिहेगा। इन गुंडों ने होरिका रचाते दिहेगा।

सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के समय विदेश में राष्ट्रीय चेतना का उभार हुआ उसकी झलक लोकगीतों में दिखाई देती है। एक मैथिली फगुआ लोकगीत में सरदार पटेल, जवाहरलाल नेहरू और जयप्रकाश नारायण को भारत की शान बताते हुए कहा गया है कि महात्मा गांधी मनोहर राग में गाते हैं-आई रे होरिया आई फिर से, होलिया आई रे।/गावत गांधी राग मनोहर,चरखा चलावे बाबू राजेंदर।/ गूंजत भारत अमराई रे,होरिया आई फिर से, आई रे।/ वीर जवाहिर शान हमारो,बल्लभ है अभिमान हमारो।/ जयप्रकाश जैसो भाई रे,हरिया आई, फिर से होरिया आई रे।

एक अन्य बुंदेली भाषा के फाग में 1942 की क्रांति के समय बलिया में घटी घटनाओं का वर्णन किया गया है। लोक कवि मथुरादास इस फाग में कहते हैं कि, जब-जब सबने मिलकर संघर्ष किया तब-तब दुश्मन की हार होती है-बाजी भारत की रणभेरी, सुन सन् ब्यालिस केरी।/ क्रांतीदल की धूम मची तो, बलिया में जिन केरी।/एक तें एक हतें भर बांके, तरुनई रंग रंगे री।/ दहल उठी अंग्रेजी 'मथुरा' देख फौज इन केरी।/

जब-जब एक रास मिली राजै, दुश्मन होत पराजै।/ रामचंद ने रावण मारो, निसचर सहित समाजै। कृस्नचंद नै कंस पछारो, दुज-देवन के काजै।/गौरमेंट से बिन असि 'मथुरा', गांधी लेत सुराजै।

ऐसे अनेक लोकगीत भारतीय भाषाओं और देशज बोलियों में बिखरे पड़े हैं जिनमें जनयुद्ध का रोमांचक वर्णन, ब्रिटिश काल की दारुण और दर्दनाक स्मृतियां छिपी हुई हैं। लोक स्मृतियों में आज भी जीवित इन गीतों को सहेजने की बहुत आवश्यकता है। इन गीतों में हमारे पुरखों के जिए गए इतिहास की अनुभूतियां समाहित हैं।

होली का रंग कवियों के संग

रमेश चन्द्र द्विवेदी
पूर्व प्रधानाचार्य, नैनीताल

वसंत को ऋतुराज कहा जाता है। वसंत के आते ही नैसर्गिक सौंदर्य सर्वत्र व्याप्त हो जाता है। यौवन और जीवन में नए राग-रंग का संचार हो जाता है। प्रकृति में भी यही संचारी भाव देखने को मिलता है। हरी-भरी वनस्पतियों से धरती आच्छादित हो जाती है। मधुमासी मौसम में प्रकृति नये रूप-रंग में नजर आती है। प्रकृति का यह उद्दीपन भाव मानव मन को अनुरंजित करता है। आम्र वन में मंजरियों पर मंडराते हुए भौंरे और कोयल की मीठी तान मन के सुप्त भावों को जाग्रत करता है। जीवन में नई उमंग और रंग भरता है। कवियों के ऊपर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से होली पर मंच पर धमाल मचाया है। उनकी लेखनी ने कमाल का काम किया है। प्रेम का रंग लाल होता है। होली में गुलाल लगाना, हंसी-ठिठोली करना प्रेम का प्रतीक बन गया। हींग लगे न फिटकरी रंग चोखा ही चोखा।

वाणी के बादशाह संत कबीर प्रतीकों के माध्यम से होली खेलने का आग्रह करते हैं। होली के रंग में सब आपाद डूब जाएं। होली के अवसर पर उनकी रहस्यमयी अभिव्यक्ति दर्शनीय है-प्रिय को रूप कहां लगा बरनो,रुपहिं माहि समानी।/जो रंग रंगे सकल छवि छाके,ताहि न सबहिं भलानी।/यों मति जाने यहि रे फाग है, यह कुछ अकथ कहानी।/ कहें कबीर सुनो भई साधो,यह गति बिरले जानी।। सूरदास वात्सल्य रस सम्राट हैं। होली के मौके पर कृष्ण के रागात्मक संबंधों को ब्रजभाषा की विभिन्न राग-रागिनियों में प्रकट किया है। गोपी-ग्वाल-बाल संग होली खेलने का दृश्य-चित्र अवलोकनीय है-हरि संग खेलत हैं सब फाग/इहिं मिस करति प्रकट गोपी,उर अंतर को अनुराग। प्रेम दीवानी मीरा के पदों में होली का राग उनके अनुराग भाव को व्यक्त करता है। दीवानगी की हद तक उनकी चाहत उनके गीतों में प्रकट हुई है। मन-वीणा के तारों को झंकृत करते हुए वो कहती हैं-होली खेलत हैं गिरधारी/भरि-भरि मूठ गुलाल लाल संग,स्यामा प्राण पियारी।/ गावत चार धमार राग तंह, दै-दैकर करतारी।/ फाग जु खेलत रसिक सांवरो,बाढ़यो रस ब्रजधारी।/ मीरा के प्रभु गिरधर मिलिया,मोहन लाल बिहारी।। बनारस की होली की कैफियत ही अलग होती है। यहां होली का हुड़दंग और मस्ती का आलम जुदा होता है। भांग की ठंडी तासीर जब गले से नीचे उतरती है तो मस्ती का रंग पूरे सबाब में नजर आता है। छायावाद के कवि जयशंकर प्रसाद होली की रात में होली आहों में बिता देते हैं। होली की हुड़दंग शायद उन्हें पसंद नहीं है। उनका वर्जनात्मक भाव देखिए-उड़ा दो मत गुलाल सी हाय/अरे वो अभिलाषाओं की धूल।/ और ही रंग नहीं लग जाए/ मधुर मंजरियां जाते झूल।। निराला जी का होली खेलने का अंदाज भी निराला है। उन्हें चाहे जैसा रंग लगाओ कोई फर्क नहीं पड़ता। भला ऐसे अक्खड़ और फक्कड़ स्वभाव वाले व्यक्ति पर क्या प्रभाव पड़ेगा। केसर की कली से बने रंग को पिचकारी में भरकर मारना जानते हैं।

प्रकृति के साथ वो धमाल मचाना जानते हैं-राग-पराग-कपोल किए हैं।/लाल-गुलाल-अमोल लिए हैं।/तरु-तरु के तन खोल दिए हैं।/आरति जोत-उदोत उतारी।/गंध पवन की धूप-धवारी।। हरिवंश राय बच्चन का गीत रंग बरसे भीगे चुनर वाली सबके जुबान पर रची-बसी है। उनके गीतों की धुन पर सभी थिरकने के लिए विवश हो उठते हैं। लोक धुनों पर आधारित उनके गीतों में मस्ती है। मधुशाला में उनका दार्शनिक अंदाज अभिव्यक्त हुआ है। एक बानगी ही पर्याप्त है-तुम अपने रंग में रंग लो तो होली है/देखी मैंने बहुत दिनों तक दुनिया की रंगीनी।/किंतु रही कोरी की कोरी,मेरी चादर झीनी।/तन के तार छुए बहुतों ने,मन का तार न भींगा।/तुम अपने रंग में रंग लो तो होली है।।

उर्दू के शायरों पर भी होली की तासीर पड़ती है। ऐसे ही एक शायर हैं नजीर अकबराबादी। वे गुल और गुलजार की बातें करते हैं। कपड़ों पर पड़े हुए रंगों के छींटें उन्हें गुलकारी नजर आती है। होली के बहार का अनुभव वो कुछ इस प्रकार करते हैं-गुलजार खिलें हो परियों के/और मजलिस की तैयारी हो।/कपड़ों पर रंग के छीटों से/खुश रंग अजब गुलकारी हो।/इस ऐश मजे के आलम में/इक गोल खड़ा महबूबों का।/ सीने से रंग छलकते हों/तब देख बहारें होली की।। होली, हो ली ऐसा कदापि नहीं है। होली की मस्ती में आपाद डूब जाएं रंगों से सराबोर हो जाएं,पर ध्यान रखें आपकी होली दूसरों के लिए संकट का सबब न बन जाए। बुरा न मानो होली है।

कविता

भावों के रंग

भावों के रंग भर नैनों में
प्रियतम तुम आ जाना,
सतरंगी सपने दिखला कर फिर
साजन छोड़ न जाना।
उड़ती हूं मैं पंख लगाकर
साजन तेरे संग में,
सपनों की दुनियां में जीती हूं
खुद को तुम में खोके।
दिल में सजते हैं मेरे अरमानों
के घरौंदे
बिसरा न देना प्रीत मेरी तुम
पिया किसी के हो के।
देखो बहुत नाजुक सी है
रिश्तों की डोर हमारी
तोड़ कभी मत देना इसको
ये है जान हमारी।

सांझ सवेरे देख के तुमको
मन पुलकित हो जाता है
डूबकर भावों के सागर में
प्रेम पूर्ण हो जाता है।

निवेदिता शुक्ला
इटावा

होली के स्वर

भीगी मेरी चूनरी, आज पिया
के रंग।
प्रियतम उर में खो गई, होली
के इस जंग।।

पिचकारी दृग मारते, भीगे
अंतस कोर।
रस से सारे सिक्त हैं,
तन-मन के हर पोर।।

मल-मल लाल गुलाल वे,
किए गाल को लाल।
सौख्य मुझे अतिशय मिला,
पिय को देख निहाल।।

मैं भीगी ज्यों चूनरी,मादक रस
परिपूर्ण।
पिय के अंतस जा घुली, जैसे
मिष्टी चूर्ण।।

प्रियतम निज दृग कोर से,
फिर-फिर मुझे निहार।
होली के स्वर बोलते,
किए रंग बौछार।।

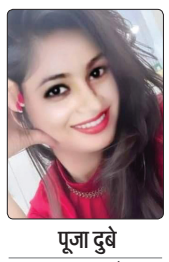

पूजा दुबे
सागर,मध्य प्रदेश

तो समझो होली है

अम्बर ने ओढ़ी चादर नीली
धरती के आंचल में सरसों
पीली
अमवा की डाली पर पीली बौर
काली कोयल के मीठे बोल
जब चले बसंत बयार और
धरती करे सतरंगी शृंगार,
तो समझो होली है।

हो हंसी-ठिठोली प्यार
नर-नार करें शृंगार
रंगों का चढ़े खुमार
कोई छेड़े मन के तार
तो समझो होली है।

फगुआरे निकलें साथ
हाथ में ढोल, मजीरा, झांझ
खूब उड़े अंबीर, गुलाल
गोपी संग नाचें हैं गोपाल
तो समझो होली है।

दहन कर सारे राग द्वेष
निकाल कर मन से सारे बैर
बांध कर नेह प्रीत की डोर
रंग बिखरे हों चारो ओर
तो समझो होली है।

डॉ. अवंतिका सिंह
स्वतंत्र लेखिका, लखनऊ

पलाश वसंत के हुलास

क्या कहूं पलाश वसंत के
हुलास,
पलाश तुम्हारे फागुनी फूल,
धरा के बाहुपाश,
ऐसा है पलाश। क्या कहूं पलाश।
कालिदास इन रक्तिम,
किंशुकों को निहार कर,
किसी की नखक्षत क्षमता,
बखान कर करते उल्लास। क्या
कहूं पलाश।
पर मुझे तुम्हें शोणित देख कर,
सत्तर सौ सत्तावन में,
हुगली के किनारे,
घने ढाक के जंगलों में,
मीरजाफर का विश्वासघात,
राबर्ट क्लाइव का छल,
स्मरण हो जाता है।
क्या कहूं पलाश।
ईश्वर न करे,
ऐसा खूनी दुर्दिन,
किसी देश के इतिहास में,
फिर न लौट आए काश।
क्या कहूं पलाश।
धरा से लिपटे हो,
हर राहगीर से,
इतना तो कह ही सकते हो,

फिर से पलासी जैसा,
दागदार इतिहास मत दुहराना।
क्या कहूं पलाश।
तुम्हारे शोख फूल,
मुझे उल्लसित तो करते हैं,

पर पलासी की याद आते ही,
अंतर्मन विषाद से भर देते हैं।
क्या कहूं पलाश।
असीम विश्वास प्रबुद्ध पीढ़ी पर,
अब न फिर होगा पलासी,
इक्कीसवीं सदी का जाग्रत,
भारत सचेत है हुलास। ऐसा है
पलाश।

डा. श्रीधर द्विवेदी
वरिष्ठ हृदय रोग विशेषज्ञ, नेशनल
हार्ट इंस्टिट्यूट, नई दिल्ली

होरी में मेरो मोहन

अब के होरी में मेरो मोहन।
तन के संग रंग दे मेरो मन।।
मोहे छेड़त है सब सखियां।
हंस-हंस करती हैं सब
बतियां।।
कहतीं छलिया तेरो मोहन।।
अब के होरी...
गोपियन संग जब तू हंसता
है।
तेरो सौं मोरा जिया जलता
है।।
कैसे दिखाऊं तोहे डाह
अगन।
अब के होरी में...
तू गोकुल का जो है लला तो।
मैं भी बरसाने की लली हूं।।
लागे डर मोरे अंत मन।
अब के होरी में...
तू जो नंद बाबा का किशोर।
मैं भी वृषभानु की किशोरी।।
कैसे नाचू बांसुरी धुन
मधुबन।
अब के होरी में...
काय करूं मैं राधा न्यारी।
कैसे बन जाए तू मेरी
प्यारी।।
हर पल डसती है तेरी
चितवन।
अब के होरी में...
तुम बांसुरी धुन ऐसे न छेड़ो।
लाज लगत हैं राह में ढेरों।।
होती है मेरो मन में उलझन।
अब के होरी में...

सरिता सिंह
लखनऊ

दारू पी भई दारू पी

दारू पी,भई दारू पी
फिर कर तू 'हा-हा, ही-ही'
दारू पी, भई दारू पी।

घर में घुस बच्चों को मार
बीबी को भी तू फटकार
अगर करे कोई तुझसे होड़
मार के डंडा सर को फोड़
बक गाली अच्छी-अच्छी
दारू पी, भई दारू पी।

चोरी कर या डाका डाल
जुटा मगर दारू को माल
पीकर फिर सड़कों पे झूम
ओंधे मुंह नाली को चूम
श्वान करें तुझ पर छी-छी
दारू पी, भई दारू पी।

लूट मजा तू लूट मजा
मिले न मिले फिर ये नशा
जले खून तो जलने दे,
गलें फेंफड़े, गलने दें
चाहे हो केंसर, टी.वी.
दारू पी, भई दारू पी।

अशोक अंजुम
अलीगढ़

कहानी

मठरी और प्यार

दुनिया में बहुत कुछ घटित होता रहता है और इसको देखने का सबका अलग नजरिया होता है। बात जब होली की हो तो विशेष हो जाती है,क्योंकि उसमें रंगबाजी जुड़ जाती है। रंगबाजी जब बिना रंग के झाड़ी जा सकती है तो रंग भी हो तो क्या बात हो। रंगबाजी के इस त्योहार से जुड़ी बहुत सी कही-अनकही कहानियां हम सबके आसपास घटित होती रहती है। कुछ चर्चित होती हैं और कुछ इतिहास में दफन हो जाती हैं। ऐसी ही एक कहानी जीजी की भी है। चंद्रकांता जीजी का नाम मौसा जी यानी उनके साहित्यिक अभिरुचि के पिताजी ने बहुत सोच-विचार कर रखा था। जीजी थी भी बहुत सुंदर इसलिए नाम सार्थक भी था। मौसी उनको चंद्रा कहती थीं,यही उनका प्रचलित नाम हो गया। क्लास वन पिता की कन्या चंद्रा जीजी को बचपन से ही पता चल गया कि वे सुंदर हैं। बस फिर क्या था उन्होंने अपने को स्वघोषित विश्व सुंदरी मान लिया और बाकी सबको अपना अनुयाई समझने लगी। बड़े होते-होते उनको इस बात का विश्वास हो गया कि उनके भृकुटीविलास से ही लड़कों की दुनिया में प्रलय आ सकती है। पढ़ने में उनका मन कतई नहीं लगता था,पर पता नहीं कैसे पर मान लीजिए जैसे-तैसे पास होती गई। हालांकि हाईस्कूल में नींव मजबूत करते हुए दूसरे साल नैया पार हुई। उनके पिताजी का उनको डॉक्टर बनाने का सपना तो छन्न से हाईस्कूल में ही टूट गया था। जीजी को अपने नाम से विशेष चिढ़ थी। कहती थी ऐसा लगता है ये नाम रखकर किसी जन्म की दुश्मनी निकाली गई है। एक दिन कहने लगी कि हमारा पढ़ने का मन नहीं है अब स्कूल नहीं जाना। बड़ी मुश्किल से मौसी ने समझाया कि कम से कम ग्रेजुएट हो जाओ वरना अच्छा रिश्ता भी नहीं मिलेगा,यह बात उनके भेजे में घुस तो गई पर पढ़ना और पढ़कर पास होना उनके एजेंडे से बाहर था। मजबूरी में किसी दूरस्थ इलाके से फार्म भरवाया गया। शारलाक होम्स के खानदानी रिश्तेदारों के लिए भी यह रहस्य अनसुलझा है कि तीन बार इंटर फेल होने वाली कन्या बीए तक कैसे पहुंची। अंत भला तो सब भला आखिरकार कांख-कूंखकर ही सही बीए की डिग्री मिल गई। केवल एक बात में वे औरों से आगे थी। उनके पीछे पसंद करने वालों की एक लंबी लाइन थी,जो चाहती थी कि कब वो घास डाले और कब वो चरे। ये फैन फॉलोइंग उनकी तवज्जो चाहने के लिए कुछ भी करने को अमादा थी। मौसा जी के पास अनेक रिश्ते आए जिन्हें जीजी ने निर्ममता से तवज्जोबल भी न समझा। उनको तलाश तो किसी विजय विक्रम सिंह की थी। अचानक घर आई और बोली, 'सुनो हेल्प मी, हमें मैरिज करनी है बट सिंपल नहीं।' 'मतलब ''लव वाली करब' 'इसके लिए लव होना भी जरुरी है न दीदी' 'अरे वो तो कर लें, समवन इन आइसाइट।' 'क्या?' 'नजर में कोई है, यूआरसो बेकूफ,डोंट अंडरस्टेंडिंग माई भावनाज।' 'आइ अंडरस्टेंड जीजी,पर हमारी अंग्रेजी आपके जितनी अच्छी नहीं है न, आपने कहां से सीखी।' वो इठला के बोली,'बेस्टेस्ट है न माई स्पीकना। वैसे तो सीक्रेट है बट यू आर नाट पराई सो बता रहे हैं। अंग्रेजी सीखे ओनली थ्री डेज में वाले कोर्स से सीखी है, माइंड ब्लास्टिंग है न।'

डॉ. आकांक्षा दीक्षित
लखनऊ

'वो तो है जीजी' 'वो तो हमें पता है।' फिर वो आश्चर्य से बोली 'यू नो बट आई डोंट नो कि यू नो' हमने बात बदलकर कहा, 'जीजी ये समवन स्पेशल है कौन' 'वो जो हमारी संकरीज लेन के किनारे में कोचिंग ओपन हुई है,उसमें पढ़ाता है, डायब्रो है। 'हायं ये डायब्रो क्या होता है जीजी' 'डायरेक्टर का ब्रदर यानी ब्रो, डायब्रो और हां वो एस्पिरिन भी है।' 'आपका मतलब है एस्पिरेंट?''हां हां वही' 'तो' 'बहन टुडे माई सर्च इज पूरी, इससे कैसे कम हो दूरी।' 'हम क्या करें, हमने क्या दस-बीस अफेयर कर रखे हैं।''वो तो पता है यू आर बोंरिग,न पटिंग न पटाइंग।' हेल्प मी, वरना मी डाइंग यू क्रांइंग।' इतना पक चुके थे कि कहा, 'जीजी माता हमसे क्या चाहती हो?' 'हमको परपोज मारना है।' 'अरे जीजी! कुछ जान पहचान तो हो जाए सीधे मार ही दोगी तो कहीं मर गया तो।'

बोली, 'नाट फ्लाई जोक,चलो हमारे साथ यू आल्सो एस्पिरिन न।' हमने कहा 'जीजी हमारी तैयारी हो रही है हमें नहीं कोंचिग करनी।' 'मत करो,बस हमारे साथ एक-दो दिन कोंचिगिया लो, घर में तो सब हमारा इस बात पर,मजाक फ्लाई करेंगे।' खैर कोचिंग ज्वाइन की गई। जीजी ने एक दिन कहा कि हमें परपोज मारने का तरीका मिल गया। अब तुम आओ चाहे न आओ। हमने चैन की सांस ली कि चलो तीन ही दिन में पिंड छूट गया। करीब एक महीना बीत गया सोचा कि उनकी खोज खबर ली जाए। हमने पूछा जीजी,'कैसा चल रहा है,कर दिया प्रपोज।' भड़क कर बोली, 'डैमफूल है वो' हमने कहा,'हुआ क्या' बोली, 'एक तो 10 दिन तक आई वेंटिग, कि होली आए, होली सही रहेगी इस काम के लिए 'फिर उससे कहा कि सर हम आपके लिए कुछ स्पेशल लेकर आएंगे। जब पांच दिन बाद कोंचिग खुली, आई गो विध गिफ्ट।'

हमारी उत्सुकता चरम पर थी 'फिर जीजी।' वो इडियट है, इडली है डोसा है, ढोकला है फाफड़ा है हम तो कहते है कि गाठिया भी है, केवल देखने में ठीक है पर हार्ट लेस है बिल्कुल' 'मतलब' 'जब हमने उसको छुट्टी में डब्बा दिया और कहा कि सर ये स्पेशल आपके लिए है, आप हमें बहुत पसंद है, पता है उसने क्या किया क्या।' डब्बा खोला और जोर-जोर से हंसने लगा यही नहीं दस-पंद्रह को इकट्ठा कर लिया। फिर बोला 'तुम ये लाई हो, ये सूखी हुई पपड़ी, ये मजबूत से पता नहीं क्या है, बताओ तो खा-खू के दांत टूट गए तो डॉक्टर को नाम तो बताना पड़ेगा न? 'था क्या वैसे' 'हमने अपने इन्हीं पर्सनल हैंड्स से अपनी फेवरेट सूजी की मठरी बनाई थोड़ी मजबूत बनी थी,लेकिन इतनी भी नहीं थी कि काट न पाए, शक्करपारे बनाए, वो शुगर फ्री बने थे,लेकिन शुगर हार्मफुल भी तो है।''अरे! सो सैड' 'अब तक तो तब तक चिंटू सब सफाचट कर चुका होता जैसे-तैसे तीन सूजी की मठरी और पांच शक्करपारे छुपा के रखे थे, वही लेकर पहुंचे थे। तुम तो जानती हो हमें कितने पसंद है फिर भी बचाकर रखे। 'छोड़ो जीजी''बहन बस यही दुख है कि ही डोंट समझिंग माई भावना, केवल मठरी की मजबूती देखी, उसमें हाइड माई स्ट्रांग लव नाट फील, सो निर्दयी, सो निर्मोही जस्ट लुकिंग लाइक लाफिंग ड्रैकुला।'

अरे जाने दो जीजी, आपको बहुत मिलेंगे मिलने की बात ही नहीं है छोटी, हमें चाहे जो कहता पर हमारी जान से प्यारी मठरी के लिए हम कुछ बर्दाश्त नहीं करेंगे। जानती हो रमेश, सुरेश, महेश, राजेश, चंदू, मिट्ठू, मुन्ना, चिंटू सबने मांग-मांगकर खाई थी। 'देख लो जीजी, इतने आप्शन है फिर काहे हैरान हो।' 'फर्स्ट टाइम यू टेल समथिंग बढ़िया, पछताएगा। कोंचिग पर तो लाक लग ही जाएगा।

'कैसे' 'जानती हो बीस स्टूडेंट्स तो हमारे ही भर्ती करवाए हुए थे। मठरी की इंसल्ट नहीं सहेंगे। तभी बाहर जोर की आवाज आई, पता चला कि कोचिंग दूसरे मुहल्ले में शिफ्ट हो रही है। हमने कहा 'जीजी देखो बंद हो गई।' बोली, 'ये तो होना ही था अच्छा हुआ खुद से चले गए वर्ना हम दीवाली तक यू-ट्यूब पर बम बनाना सीख के उड़ा देते। सही है भई! प्यार भले ही मठरी से हो,अंधा ही होता है और किसी भी हद तक जा सकता है।

रंगों की अठखेलियां

मनके सारे त्याग कर, कष्ट और अवसाद।
पिचकारी करने लगी, रंगों से संवाद।।

रिश्तों की शालीनता, के टूटे तटबंध।
फागुन ने जब जब लिखा,मस्ती भरा निबंध।।

गुझिया से कचरी लड़े, होगी किसकी जीत।
एक कह रही है गजल, एक लिख रही गीत।।

सुबह सुगंधित हो गई, खुशबू डूबी शाम।
अमराई ने लिख दिया, खत फागुन के नाम।।

तन मन में उल्लास के,फूटे अंकुर देख।
सबने पढ़े गुलाल के,गंध पगे आलेख।।

हर चेहरे से हो गई,सभी उदासी दूर।
मन के भीतर जब बजा,फागुन का संतूर।।

मस्ती और उमंग वो,आई ज़ब जब याद।
रंग सारे करने लगे, होली का अनुवाद।।

फिर से भरने के लिए, रिश्तों में एहसास।
रंगो की अठखेलियां, जगा रही विश्वास।।

रंग-बिरंगे रंग से, कर सोलह श्रृंगार।
खुशी लुटाने आ गया,रंगों का त्योहार।।

योगेन्द्र वर्मा 'व्योम'
मुरादाबाद

व्यंग्य

फागुन में कवि सम्मलेन

फागुन यदि न फगुनाये तो कैसा फागुन। मौसम ही ऐसा होता है जैसे हवा में भांग घुली हो। मस्ती ऐसी कि बच्चे हों या बूढ़े सभी अपने आपको भूलकर होली के रंग में रंग जाते हैं। होली के निबंध में कुछ रटे रटाए वाक्यों का युग समाप्त हो गया। न भक्त प्रहलाद के प्रसंग दोहराए जाते हैं, न होलिका बुआ की कथा किसी को सुनाई जाती है। इतना जरूर है कि कागज के रंगीन परिधान पहनाकर होलिका बुआ को लकड़ी,उपलों के ढेर पर बिठाने की रस्म अदायगी हर बरस की जाती है।

होलिका बुआ हर बरस जलकर खाक हो जाती हैं, फिर भी उसकी मृत्यु नहीं होती। अगले बरस पुनः तैयार होकर होली उत्सव में अपनी आहुति देने आ जाती है। होली एक है,मगर इसके रूप अनेक हैं। अपने कवि मित्र सामान्य दिनों में मंचों पर भले ही वीर रस,श्रृंगार रस, भक्ति रस की रचनाएं सुनाते रहें,मगर फागुन में स्वयं को हास्य रस का रसावतार सिद्ध करने में पीछे नहीं रहते। उनके के लिए तो यह कविता सुनाने का नहीं,केवल चटपटे किस्से सुनाने का सीजन है,यूं तो यह सीजन एक पखवाड़े तक चलता है, मगर होली से चार दिन पहले और होली के चार दिन बाद तक यह सीजन चरम पर रहता है। कवि चाहे किसी भी रस का हो,होली पर उसे हास्य रस में पगे रहना जरूरी होता है। जिन कवियों के उपनाम से हास्य का बोध हो, उनकी डिमांड सीजन में अधिक बढ़ जाती है। खास बात यह है कि होली की मस्ती में कविता के नाम पर कुछ भी सुनाओ, सब चलता है, हास्य कविताओं में अधिकतर कॉपीराइट का झमेला भी नहीं होता। चुटकुलों को कविता में ढालकर जैसे चाहे सुना सकते हैं। चुटकुलें अक्सर वही रहते हैं,बस सुनाने वालों के नाम बदलते हैं। यदि कवि सम्मेलन का संयोजक बैंड मास्टर की तरह कुशल प्रबंधन करे तो एक-एक घंटे के अंतराल पर एक ही शहर में तीन-तीन आयोजन सरलता से संपन्न कर सकता है। सतरंगी जी के संयोजन में पिछले बरस ऐसा ही प्रयोग किया था। पहले कार्यक्रम में सरस्वती वंदना के बाद तीन कवियों का काव्य पाठ कराकर उनकी रवानगी अगले कार्यक्रम के लिए यह निर्देश देकर कर दी, कि जब तक तीनों कवि अपना काव्य पाठ करेंगे, तब तक अगले तीन कवि उस आयोजन को आगे बढ़ाने के लिए उपस्थित हो जाएंगे। उसके उपरांत काव्य पाठ कर चुके तीनों कवि तीसरे कवि सम्मेलन के लिए रवाना हो जाएंगे। पहले कवि सम्मेलन का समापन अंतिम तीन कवियों की टीम करेगी, तदुपरांत वह दूसरे कवि सम्मेलन में जाएगी, वहां से वह अपने काव्य पाठ से दूसरे कवि सम्मेलन का समापन करेगी,तब तक छह कवि तीसरे आयोजन में भरपूर ठहाके लगवाएंगे, अंत में सभी नौ कवि तीसरे कवि सम्मेलन में अंत तक उपस्थित रहेंगे। भोजन पानी की व्यवस्था तीसरे कवि सम्मेलन में ही रहेगी। इस प्रकार संयोजक के कुशल संयोजन में एक सांझ को तीन कवि सम्मेलनों के नाम किया जा सकेगा। यूं तो होली से ठीक एक दिन पहले कार्यक्रमों की गिनती बढ़ भी सकती है, वैसे कवि बैंड की तर्ज पर मनमौजी कवियों को साधना सरल नहीं होता,मगर यदि लिफाफों का अच्छा आकर्षण मिले तो कवि सम्मेलन के नाम पर ओवरटाइम भी बुरा नहीं होता। सतरंगी जी की प्रेरणा अनेक कवि सम्मेलन संयोजकों के लिए संजीवनी का कार्य कर रही है। कुछ संयोजक होली पर इसी तकनीक को अपनाकर सीजन का लाभ उठाने में जुटे हैं।

सुधाकर आशावादी
सेवानिवृत्त प्रोफेसर

अररर कबीर

होली जलाने के समय ढोलक की थाप पर गाए जाने वाले कुछ लोकगीतों का आरंभ 'अररर कबीर' से होता है और पश्चात जो गीत गाए जाते हैं उन्हें यहां लिखा नहीं जा सकता। उनमें अतिशय श्रृंगारिकता होती है, जिसे बोलचाल की भाषा में 'अश्लील' कहते हैं। इनके कहीं संग्रह नहीं प्रकाशित हैं,किंतु ये ग्रामीण संस्कृति का आवश्यक अंग होकर लोगों के कंठों में विराजमान हैं। इन गीतों को 'कबीरें' कहते हैं और यह विधा का नाम है। इसका कवि कबीरदास से कुछ भी लेना-देना नहीं है,जैसा कि एक बौद्धिक वर्ग का सोच है। रसों में श्रृंगार को 'रसराज' कहा गया है और सृष्टि के सृजन एवं विस्तार के मूल में रति क्रीड़ा ही स्थित है। ऐसे में पुरुष मन नारी सौंदर्य की ओर नारी मन नर के पुरुषार्थ और ऐश्वर्य पक्ष की ओर आकर्षित रहा है। इन मनोभावों के विस्फारण और प्रकटीकरण हेतु सभ्य समाज ने कुछ अवसर विनिश्चित कर दिए हैं। होली एक ऐसा ही त्यौहार है जिसमें बाबा भी देवर मान लिए जाते हैं। शादी ब्याह में मड़वा सिराने (विसर्जन) के बाद लौटते समय भी स्त्रियां कुछ ऐसे ही गीत गाती हैं। वे पुरुषों को देख-देख कर उनके नामोच्चार के साथ घोर श्रृंगारिक शब्दावली भरे गीत गाती हैं,जिन्हें सुनते ही पुरुष भागते हैं। उनके अंत में "बल्लो भाई बल्लो" आता है। ऐसे पर्व और अवसर निर्धारित कर देना हमारे पूर्वजों का चातुर्य ही है,क्योंकि यह चित्त-वृत्ति हर मानव में उपस्थित रहती है,चाहे वह संयम एवं योग की कितनी ही ऊंचाई पर क्यों न हो! अब आदिकवि महर्षि वाल्मीकि को ही ले लीजिए। वर्षा ऋतु के बाद नदियों का जल धीरे-धीरे उतरता है और उनकी तटवर्ती भूमि खुलती जाती है। कालिदास ने 'कुमार संभव' के आठवें सर्ग में शिव-पार्वती की विलास लीला का अति श्रृंगारिक वर्णन किया है, जिसे साहित्यकारों का एक वर्ग 'अश्लील' मानता है। यद्यपि सम्राट चन्द्रगुप्त सहित एक बड़ा वर्ग इसे सही मानता है,क्योंकि पति-पत्नी के बीच कुछ भी गुप्त नहीं रहता। जयदेव ने 'गीतगोविंद' में राधाकृष्ण की लीलाओं के वर्णन में कुछ भी कसर नहीं छोड़ी। सर्ग-12 "सुप्रीत पीतांबर" में कृष्ण चाटुकरिता करते हुए राधा से कहते हैं,' प्रिये! यहां कोई नहीं है,तुम प्रेम भरे अनुकूल वचन बोलो,मैं रति में बाधक बन रहे तुम्हारे कुचों पर पड़ा हुआ यह दुकूल (दुपट्टा) हटा रहा हूं। (विरहमिवापनयामि पयोधररोधकमुरसिदुकूलम्)। और तो और अपने वयोवृद्ध तुलसी बाबा ने 'रामलला नहछू' में लिखा है कि 'नहखुर' की रस्म होते समय दशरथ 'नउनियां' को गौर से निहार रहे हैं। अब राज घराने की नाइन सुंदरी तो रही ही होगी। जन्मांध कवि सूरदास ने देखा कि गाय दुहते समय कृष्ण जी को आसपास राधा दिख गईं, तो उनके हृदय में रति भाव जागृत हो गया और एक थन की धार तो पात्र में डालते थे और दूसरी राधा के ऊपर फेंकने लगे, "धेनु दुहत अति ही रति बाढ़ी। एक धार दोहनि पहुंचावत एक धार जहां राधा ठाढ़ी"। रीति कालीन कवि पद्माकर ने होली खेलकर लौटी एक युवती के एकांत में जाकर कपड़े बदलने का दृश्य कवितांकित किया है।

अपने मर्यादा पुरुषोत्तम राम भी न केवल अवध और सरयू तट पर होली खेलते थे,बल्कि ससुराल भी इस हेतु जाते थे। लोकगीतों की निधि इसकी गवाही दे रही है। "होरी ख्यालत राम जनकपुर मां-"। जाहिर है कि साली, सरहजें तो वहीं मिल सकती हैं।तब रंगोत्सव के इस पर्व के क्रिया-कलापों से लेकर कबीरें तक मानवोचित भावों के अनुकूल ही हैं।

रघोत्तम शुक्ला
सेवानिवृत्त पीसीएस

होली में पारंपरिक रंगों का महत्व

लक्ष्मीनारायण तिवारी
सचिव, ब्रज संस्कृति शोध संस्थान, वृन्दावन

होली का त्योहार हो और ब्रज का ध्यान न आए, ऐसा हो ही नहीं सकता। होली का ब्रज में विशेष महत्व है। इसीलिए होली और ब्रज एक दूसरे का पर्याय बन गए हैं। श्रीकृष्ण होली के नायक हैं और नायिका राधारानी हैं। राधा-कृष्ण की दिव्य होली प्रति वर्ष ब्रज के देवालयों में जीवंत हो उठती है, जिसे देखने के लिए हर वर्ष हजारों तीर्थयात्री, भक्त एवं पर्यटक ब्रजभूमि में आते हैं।

ब्रज में होली का प्रारंभ लगभग सवा माह पूर्व वसंत पंचमी के दिन से ही हो जाता है। वैष्णव देवालयों में वसंत पंचमी से ठाकुरजी के सम्मुख चांदी के बटेरों में विभिन्न प्रकार के गुलाल रखे जाते हैं, जिन्हें दर्शनार्थियों पर छिड़का जाता है। फाल्गुन शुक्ला एकादशी से ब्रज के देवालयों में सर्वत्र गीले रंगों का डालना प्रारंभ हो जाता है। फाल्गुन शुक्ला नवमी के दिन बरसाने में विश्व प्रसिद्ध लट्ठामार होली होती है जिसके बाद मथुरा में श्रीकृष्ण जन्मस्थान पर होली का आयोजन होता है। वृंदावन में फाल्गुन शुक्ला एकादशी से धुलेंटी तक होली होती है। इसके दूसरे दिन दाऊजी (बलदेव) का प्रसिद्ध हुरंगा होता है। ब्रज में होली का समापन वृंदावन के रंगजी मंदिर में होने वाले ब्रह्मोत्सव की होली सवारी निकलने के उपरांत ही होता है। होली मूलतः रंगों का त्योहार है। ब्रज के देवालयों में विशुद्ध प्राकृतिक रंगों के प्रयोग की परंपरा रही है। ब्रज के प्रमुख देवालयों में ठाकुरजी की सेवा में कैमिकल से बने कृत्रिम रंगों का प्रयोग अब तक नहीं होता है। होली से पूर्व देवालयों में पारंपरिक विधि से रंग तैयार किए जाते हैं। पारंपरिक और प्राकृतिक रंगों के नाम होली विषयक ब्रजभाषा की मध्यकालीन पद-पदावलियों में भी प्राप्त होते हैं। वृंदावन के श्रीधाम गोदा विहार मंदिर स्थित ब्रज संस्कृति शोध संस्थान में कई ऐसी दुर्लभ पांडुलिपि भी संग्रहीत हैं जिनमें होली के अवसर पर गाए जाने वाले विभिन्न ब्रजभाषा पद संकलित हैं।

सखी खेलत मोहन लाल हो, ब्रज होरी आई रस भरी।
चोबा, चंदन, अरगजा वीथिन में रच्यौ है गुलाल।।
संग सखा अति सोहने मधि नायक मोहन छैल।
टोकत रोकत वधुन कौं गोकुल में चलत न गैल।।
कर पिचकारी कनक की और फेंटन सुरंग अबीर।
चहुं ओर रंग बहि चले चरचत रंग केसर नीर।।

परंतु आज अधिकांश लोगों को इन प्राकृतिक रंगों के विषय में जानकारी नहीं है। इन रंगों को बनाने में उत्तम कोटि के सुगंधित द्रव्यों और पुष्पों का उपयोग होता था। यह रंग शरीर व त्वचा के लिए हानिरहित होते हैं। देवालयों की होली में प्रयोग होने वाले कुछ प्रमुख रंग हैं -

टेसू के फूलों का रंग

पलाश को ब्रज में 'टेसू' या 'ढाक' कहा जाता है। फाल्गुन-चैत्र मास में होली के समय इस के वृक्ष पर फूल खिलते हैं, इन फूलों को पानी में उबाल कर पीला रंग तैयार किया जाता है। फूलों को पानी में उबालते समय थोड़ा चूना और डाल देते हैं जिससे यह रंग चटख वसंती हो जाता है। रंग के ठंडा होने पर इसे छानकर बड़े-बड़े कलशों में भर लिया जाता है। होली के अवसर पर चांदी और सोने की पिचकारियों और कमोरी में भरकर इस रंग को दर्शनार्थियों के ऊपर छिड़का जाता है। कमोरी एक प्रकार का पात्र होता है जिसका प्रयोग होली में रंग भरकर डालने के लिए किया जाता है।

केसर

केसर एक प्रकार का सुगंधित व महंगा द्रव्य है, जो फूलों में से निकाला जाता है और कश्मीर में पैदा होता है। इसे पानी या दूध में घोलकर सोने जैसा पीला रंग तैयार किया जाता है। यह रंग कुछ लालिमा लिए हुए होता है। होली के दिनों में केसर का रंग चांदी के कटोरों में भरकर ठाकुरजी के समक्ष रखा जाता है। केसर का प्रयोग रंग बनाने के अलावा ठाकुरजी के पंचामृत, तिलक, अंगराग, मिष्ठान आदि में भी होता है।

चंदन

चंदन पेड़ की लकड़ी से प्राप्त होता है। यह लाल, सफेद तथा पीले रंग का होता है। चंदन के पेड़ दक्षिण भारत में कर्नाटक तथा नीलगिरी पर अधिक होते हैं। मलयगिरी का चंदन विशेष रूप से प्रसिद्ध है। चंदन अपनी अत्यधिक सुगंध और शीतलता के कारण पानी में घिसकर शरीर पर लगाने के काम आता है। होली के अलावा चंदन ठाकुरजी के तिलक, अंगराग में भी प्रयुक्त होता है।

चोवा

चोवा एक काले रंग का सुगंधित तेल होता है। यह चंदन और अगर के तेल व गोंद तथा मरसे के फूलों को मिलाकर और गरम करके बनता है। होली के अवसर पर इसे छिड़का जाता है। इससे कपड़ों पर काले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। होली के अलावा चोवा का प्रयोग चंदन शृंगार (अक्षय तीज) के समय देव विग्रहों पर लेपन के लिए होता है। चोवा के लेपन के बाद ही देव विग्रहों पर चंदन की परत चढ़ाई जाती है।

रोली

रोली या कुमकुम गहरे लाल रंग का बारीक चूर्ण होता है, जो चूना और हल्दी के सम्मिश्रण से तैयार होता है। होली खेलने के अलावा इसका प्रयोग तिलक आदि में भी होता है।

अबीर

अबीर अभ्रक के चूर्ण से बनता है, जिसे ब्रज में 'भुड़भुड़' भी कहते हैं। यह अत्यंत चमकीला पदार्थ होता है, जिसे गुलाल में भी मिलाया जाता है।

कुमकुमा कुमकुमा गुलाल व रंगों से भरी हुई लाख की गेंद होती है जिसे किसी व्यक्ति विशेष की ओर फेंककर मारते थे। शरीर से टकराकर इसके रंग बिखर जाते थे।

गुलाल होली में सूखे रंग के रूप में गुलाल का प्रयोग सर्वाधिक होता है। गुलाल अरारोट में गुलाबी, लाल, पीला, हरा आदि रंग मिलाकर तैयार किया जाता है। इसमें सुगंध के लिए इत्र भी डाल दिए जाते हैं। यह बारीक चिकना चूर्ण होता है, जिसे होली में दूसरों के ऊपर फेंका जाता है।

अरगजा

अरगजा अगर वृक्ष की लकड़ी का तेल, गेहला, बनफशा, गुलाब, चंदन तथा कपूर आदि के मिश्रण से बना सुगंधित पीले रंग का, शीतलता प्रदान करने वाला तेल है जिसका प्रयोग देवालयों में होली खेलने के लिए किया जाता है। ये प्राकृतिक रंग देवालयों की होली को दिव्यता प्रदान करते हैं। देश-विदेश से आने वाले हजारों तीर्थयात्री व पर्यटक ब्रजवासियों के संग इन रंगों में भीगकर अपने आप को बड़भागी मानते हैं। भक्तजनों को इन रंगों में भीगकर भी तृप्ति में अतृप्ति की अनुभूति बनी रहती है। होली के अवसर पर ब्रज के देवालयों में रस उमड़ पड़ता है। ब्रजराज श्रीकृष्ण और राधिका रानी के साथ होली खेलने का यही अवसर होता है, इसे कौन छोड़ना चाहेगा। भक्त और भगवान होली के रंगों में भीगकर एकरंग हो जाते हैं। तन-मन की सारी ग्रंथियां खुल जाती हैं। धन्य हैं ब्रज के ठाकुर, दिव्य है उनकी होली और अद्भुत हैं उनके ये रंग।

खाना खजाना

होली पर कुछ खट्टा, कुछ मीठा

होली पर मावा गुजिया एक पारंपरिक भारतीय मिठाई है, जो आमतौर पर होली के त्योहार पर बनाई जाती है। यह एक मीठी, तली हुई पेस्ट्री है, जो मीठे खोये (मावा), सूखे मेवों और नारियल के मिश्रण से भरी होती है। घर पर गुजिया बनाने का स्वाद कुछ अलग ही होता है। यहां घर पर मावा गुजिया बनाने की विधि दी गई है।

सामग्री

- मैदा चार कटोरी
- घी-आधा कटोरी
- दूध-एक कटोरी मैदा गूंथने के लिए
- मावा-आधा किलो
- बूरा-300 ग्राम
- बादाम-10 से 12 (बारीक कटे हुए)
- काजू - 10 से 12 (बारीक कटे हुए)
- सूखा नारियल - 1/3 कप (कद्दूकस किया हुआ)
- किशमिश - 1 टेबल स्पून

- इलायची -6 से 7
- घी-तलने के लिए
- 2 टी-स्पून मैदा का घोल गुजिया को बांधने के लिए

बनाने की विधि

गुजिया बनाने के लिए मैदा से डोह बनाकर तैयार कर लीजिए। मैदा के बीच में थोड़ी सी जगह बनाकर इसमें आधी कटोरी घी (मोयन) मिला दीजिए। मैदा में थोड़ा-थोड़ा गुनगुना दूध डालकर पूरी के आटे से थोड़ा सख्त गूंथकर तैयार कर लीजिए। गुंथी हुई मैदा को ढककर 20 से 25 मिनट सेट होने के लिए रख दीजिए।

स्टफिंग बनाने के लिए - खोये को अच्छी तरह भून लें और अच्छी खुशबू आने तक मध्यम आंच पर भून लीजिए। ठंडा होने पर इसमें भुने व पिसे हुए काजू और बादाम डालिए। फिर कद्दूकस किया हुआ नारियल, किशमिश एवं छोटी इलायची पाउडर डालकर बूरा डाल दीजिए और अच्छी तरह से मिला दीजिए। सारी चीजों को अच्छी तरह से मिला लीजिए। स्टफिंग तैयार है।

मैदा के सैट होने पर इसको थोड़ा सा मसल लीजिए। गुंथे मैदा की छोटी-छोटी लोइयां तोड़कर तैयार कर लीजिए। इन्हें ढककर रखें ताकि ये सूखे न। फिर एक लोई उठाइए और इसे मसलते हुए गोल कीजिए और पेड़े की तरह बना लीजिए। फिर इसे पूड़ी जितनी साइज का पतला बेल लीजिए। किनारे से दबाते हुए ही बेलें। यह कही से मोटी और कही से पतली नहीं होनी चाहिए।

एक सांचा लीजिए और इसके ऊपर पूड़ी का निचला भाग ऊपर की ओर रखिये। इसमें दो छोटी चम्मच स्टफिंग बीच में रखिए। पूड़ी के चारों ओर थोड़ा सा मैदा का पेस्ट लगाइए और सांचे को चारों तरफ से अच्छी तरह दबाकर बंद कर दीजिए। सांचे के बाहर की साइड बचे अतिरिक्त मैदा को तोड़कर हटा दीजिए। सांचे को खोलिए और गुजिया को निकालकर एक प्लेट में रख लीजिए, जो अतिरिक्त आटा हटाया है, उसे एक अलग प्लेट में रख लीजिए, इसे बाद में इकट्ठा करके गुजिया बनाने के ही उपयोग में लाया जा सकता है। इस तरह से सारी गुजिया बेलकर और भरकर तैयार कर लीजिए। अब कढ़ाई में घी डालकर गरम करें। जब घी गरम हो जाए तो गैस को धीमी कर दें और उसमें गुजिया डालकर धीमी गैस पर सेंक लें। जब गुजियां लाल हो जाएं तो गर्म-गर्म खाने के लिए सर्व करें।

मंजुला शर्मा
आगरा

दही वड़ा

सामग्री

- 1 किलो उड़द की दाल
- एक चुटकी बेकिंग सोडा
- एक इंच अदरक कद्दूकस किया हुआ
- आधा चम्मच काली मिर्च पाउडर
- 2 हरी मिर्च कटी हुई
- आधा चम्मच लाल मिर्च पाउडर
- आधा चम्मच भुना-पिसा जीरा
- इमली की खट्टी-मीठी चटनी
- धनिये की चटनी
- 2 कप दही फेंटा हुआ
- आधा छोटी चम्मच काला नमक
- नमक स्वादानुसार
- तेल
- सजावट के लिए दही वड़ों को बारीक कटी हरी धनिया की पत्ती, भूने-पिसे जीरे और लाल मिर्च का प्रयोग कर सकते हैं।

बनाने की विधि

सबसे पहले रातभर के लिए उड़द दाल को भिगो दें, फिर सुबह दाल के छिलके हटाकर दाल का पानी निकाल लें। अब दाल को मिक्सर में पीसकर दाल का पेस्ट बना लें। फिर कटी हुई हरी मिर्च, अदरक, बेकिंग सोडा और नमक मिला लें। एक कढ़ाई में तेल गर्म कर लें और हाथों से दाल पेस्ट के गोल शेप में बड़े बनाकर, बड़ों को गर्म तेल में सुनहरा होने तक फ्राई करें। एक भगोने में गर्म पानी कर लें और फ्राइड बड़ों को नरम होने के लिए गर्म पानी में डाल दें। जब बड़े नरम हो जाएं, तब इन्हें किसी बर्तन में निकालें और दही फेंटकर वड़ों पर डालें। फिर उसके ऊपर से जीरा पाउडर, लाल मिर्च पाउडर, काला नमक, इमली की चटनी, धनिए की चटनी और नमक डालकर दही वड़ा परोसकर खाएं।

शैफाली शर्मा
फूड ब्लॉगर

रासायनिक रंगों से करें परहेज

डॉ. अर्चना श्रीवास्तव
चिकित्सक, लखनऊ

रासायनिक रंग में मोजूद एल्युमीनियम ब्रोमाइड, कॉपर, सल्फेट जैसे तत्व त्वचा रोग व एलर्जी पैदा करते हैं। वहीं दूसरी तरफ आंखों में खुजली, लालपन, अंधत्व के अलावा कई दर्दनाक परिणाम देते हैं और इन रंगों की धुलाई होने पर ये नालियों से बहते हुए बड़े नालों और नदियों तक प्रवेश कर जाते है और प्रदूषण के कारक बनते हैं। रसायनों से तैयार रंग, लेड ऑक्साइड किडनी को प्रभावित करते हैं, आंखों में एलर्जी और कई बार नेत्रहीनता तक के कारण बन जाते है। ये रासायनिक रंग कई लोगों में अस्थमा और एलर्जी, त्वचा पर कैंसर जैसे भयावह रोगों को जन्म दे देते हैं। होली के रंगों में सिलिका, सीसा, कांच और पारा जैसे केमिकल होते हैं, जो फेफड़ों को भी नुकसान पहुंचा सकते हैं और सांस से जुड़ी समस्याओं का कारण बन सकते हैं जिससे आपको खांसी और सांस लेने की परेशानी हो सकती है। होली खेलते समय ज्यादा मात्रा में मुंह में रंग जाने से पेट से जुड़ी समस्याएं हो सकती हैं जिससे उल्टी, दस्त, पेट में दर्द और पेट का इंफेक्शन होने का जोखिम भी बढ़ सकता है।

होली में रासायनिक रंगों की बजाय प्राकृतिक रंगों का इस्तेमाल किया जाए तो हमारे स्वास्थ पर इनका दुष्प्रभाव नहीं होगा। हम चाहे तो अपने ही घर में प्राकृतिक रंगों को बना सकते हैं। हमारे रसोई में ही उपलब्ध अनेक वनस्पतियों का उपयोग कर कई तरह के प्राकृतिक रंगों को बनाया जा सकता है। हरे सूखे रंग को तैयार करने के लिए मेहंदी का सूखा चूर्ण लिया जाए और इतनी ही मात्रा में आटा मिला लिया जाए। हरा रंग बनाने के लिए पालक या मैथी का इस्तेमाल किया जा सकता है। इसे पीसकर या उबालकर गीला रंग और इसके पेस्ट को सुखाकर अरारोट या चावल के आटे के साथ पाउडर वाला सूखा रंग आसानी से बनाया जा सकता है।

गुलाबी रंग तैयार करने के लिए चुकंदर के बारीक टुकड़े करके एक लीटर पानी में डालकर पूरी रात के लिए रख दीजिए और सुबह गुलाबी रंग तैयार हो जाएगा। लाल रंग के लिए गुड़हल के खूब सारे ताजे लाल फूलों को एकत्र कर लें और छांव में सुखा लें और बाद में इन्हें कुचलकर इनका पाउडर तैयार कर लें और इस तरह तैयार हो जाएगा सूखा लाल रंग। यह लाल रंग बालों के लिए एक जबरदस्त कंडिशनर होता है। साथ ही गुड़हल बालों के असमय पकने को रोकता है और बालों का रंग काला भी करता है। इसके अलावा लाल रंग बनाने के लिए अनार के छिलकों को पानी में उबाल लें, इससे आपको लाल रंग मिलेगा। इसके अलावा आप लाल चंदन पाउडर को सूखे रंग और गीले रंग के तौर पर उपयोग कर सकते हैं।

पीला सूखा रंग तैयार करने के लिए एक चम्मच हल्दी और बेसन को मिलाकर सूखा पीला रंग तैयार किया जाता है। ये पीला रंग न सिर्फ आपकी होली रंगनुमा करेगा, बल्कि चेहरा और संपूर्ण शरीर कांतिमय बनाने में मदद भी करेगा। बेसन की उपलब्धता न होने पर गेहूं, चावल या मक्के के आटा का उपयोग किया जा सकता है। पीला तरल रंग तैयार करने के लिए हल्दी को एक लीटर पानी में डालकर उबाल लिया जाए और इसमें पीले गेंदें के फूल डालकर रात भर डुबोकर रखा जाए, अगली सुबह हर्बल पीला तरल रंग तैयार रहेगा और फिर खेलिए खूब होली इस पीले रंग से।

पौधे से प्राप्त रंग स्वास्थ्य के लिए उत्तम होने के साथ-साथ पर्यावरण मित्र भी होते हैं। इसके उपयोग से त्वचा पर किसी भी तरह की एलर्जी, संक्रमण या रोग नहीं होते हैं और तो और ये सेहत की बेहतरी में मदद करते हैं। रासायनिक हानिकारक रंगों का इस्तेमाल हम सबकी सेहत के लिए बेहद घातक हो सकता है, जो लोग अस्थमा, एलर्जी और टीबी जैसी बीमारी से ग्रसित हैं, उन्हें अधिक सावधानी की जरूरत है।

फिल्मी गीतों में होली की मस्ती

वीर विनोद छाबड़ा
वरिष्ठ लेखक, लखनऊ

यूं तो फिल्मीं होलियां मस्ती और एकता का संदेश देती हैं, लेकिन फिल्म 'जख्मी' में सुनील दत्त बदले की भावना से ओतप्रोत दिखते हैं। होली के रंग में दिल का लहु ये किसने मिला दिया, आई बहार कलियां खिलीं तो गुलशन जला दिया, दिल में होली जल रही है... (गौहर कानपुरी)। 'शोले' की होली भला कौन भूल सकता है- होली के दिन दिल खिल जाते हैं, रंगों में रंग मिल जाते हैं, गिले शिकवे भूल के दोस्त दुश्मन भी गले मिल जाते हैं, इसी में आगे हेमा मनुहार करती है कि यही तेरी मर्जी है तो अच्छा तू खुश हो ले पास आ के, न छूना मुझे चाहे दूर से भिगो ले। धर्मेंद्र भी कम नहीं हैं, हीरे की कनी है तू, मट्टी से बनी है तू, छूने से जो टूट जाएगी (आनंद बक्शी) और फिर धाएं, धाएं, धाएं...डाकुओं ने हमला कर दिया। एक उम्दा गाने का लुत्फ जाता रहा।

याद आ रहा है सत्तर के दशक में भट्ट बंधुओं के 'होली आई रे' में होली आई होली आई ... के खत्म होते ही नायिका बहक गई थी। 'कटी पतंग' में विधवा नायिका आशा पारिख को राजेश खन्ना ने होली खेलने पर मजबूर किया- आज न छोड़ेंगे बस हमजोली, खेलेंगे हम होली चाहे, भीगे तेरी चुनरिया, भीगे रे चोली। 'आखिर क्यों' की स्मिता पाटिल को कुढ़न होती है जब पति राकेश रोशन को सहेली टीना मुनीम के साथ रंग खेलने की आड़ में रासलीला मनाते देखती है - सात रंग में खेल रही है दिल वालों की टोली, अरे इस मौसम में जो न भीगे, क्या है उसका जीना ...(इंदीवर)

होली और अमिताभ बच्चन तो एक-दूसरे के पर्याय हैं। अस्सी के दशक के बाद जवां हुई पीढ़ी का सबसे पसंदीदा होलियाना- रंग बरसे भीगे चुनर वाली रंग बरसे, अरे कैनें मारी पिचकारी तोहरी भीगी अंगिया, सोने के थाली में जूना परोसा, खाए गोरी का यार बलम तरसे। बेमौसम भी बच्चे से लेकर जवान तक खुद को रंगों से सरोबर समझते हुए थिरक उठते हैं। 'सिलसिला' का ये गाना है रियल लाइफ को एक समझौते के अंतर्गत रील लाइफ लाया गया था। यानि अमिताभ-रेखा की रियल लव स्टोरी का फाइनल दफन। अमिताभ की होली 'बागबान' में भी सुपर हिट रही- होली खेलें रघुवीरा अवध में, हो साठ बरस में इश्क लड़ाए, मुखड़े पे रंग लगाए बड़ा रंगीला सांवरिया। सदी बदली, मिजाज बदला और फिल्मों में होली का रंग भी बदला। देखिए नमूना- रंगों में है प्यार की बोली, मेरे पीछे-पीछे क्यों आए, मेरा जीया क्यों धड़काए, जा रे जा डोंट टच माई चोली (वक़्त)। मिला न कोई ऐसा मेरे सपनों जैसा, छान के मोहल्ला सारा देखा लिया (एक्शन रीप्ले)। बलम पिचकारी जो तूने मुझे मारी, तो बोले रे जमाना खराबी हो गई, मेरे अंग राजा जो तेरा रंग लागा, तो सीधी साधी छोरी शराबी हो गई, जीन्स पहन के जो तूने मारा ठुमका, तो लट्टू पड़ोसन की भाभी हो गई (ये जवानी है दीवानी)।

कुछ यादगार फिल्में और भी हैं जिनके गानों में होली खेली गई है- दुर्गेश नंदनी, फूल और पत्थर, गाइड, प्यार की कहानी, सौतन, नमक-हराम, नदिया के पार, कामचोर, पराया धन, मशाल, आपबीती, आपकी कसम, राजपूत, बालिका बधु, डर, होली, धनवान, मोहब्बतें, मंगल पांडे आदि। जब तक त्यौहार हैं और फिल्में हैं, होली आती रहेगी। स्वरूप बलदता रहेगा। रंग का अपना नशा है और नशे का अपना रंग है। दोनों के मिलन का चलन बहुत बढ़ गया है। नए और पुराने में होड़ चलती रहेगी, लेकिन ओल्ड इज गोल्ड। तन रंग लो मन रंग लो, होली खेलत नंदलाल बिरज में। जब-जब होली आएगी, इनकी मधुर धुनों पर पैर जरूर थिरकेंगे।

साप्ताहिक राशिफल

-पं. मनोज कुमार द्विवेदी
ज्योतिषाचार्य, कानपुर

मेष यह सप्ताह व्यस्तता भरा रहने वाला है। सप्ताह के प्रारंभ में आपको न सिर्फ कार्यक्षेत्र, बल्कि पारिवारिक कारणों के चलते अधिक भागदौड़ करनी पड़ सकती है। इस दौरान घर, परिवार और कार्यक्षेत्र में तालमेल कायम रखने की जरूरत रहेगी।

वृष इस सप्ताह की शुरुआत कुछ एक बड़े खर्चों के साथ होगी। इस दौरान आप परिवार के लिए सुख-सुविधा से जुड़ी चीजों पर बड़ी राशि खर्च कर सकते हैं जिससे त्योहार का आनंद बढ़ जाएगा। सप्ताह के मध्य में आपको अचानक से करियर-कारोबार के सिलसिले में लंबी या छोटी दूरी की यात्रा करनी पड़ सकती है।

मिथुन यह सप्ताह शुभता लिए रहने वाला है। परिवार और मित्रों के साथ त्योहार का भरपूर आनंद लेंगे। इस सप्ताह आप जिस भी क्षेत्र में पूरे मनोयोग से प्रयास करेंगे आपको उस क्षेत्र में मनचाही सफलता और लाभ प्राप्त होगा। घर और बाहर दोनों जगह आपको स्वजनों का सहयोग और समर्थन मिलता हुआ नजर आएगा।

कर्क यह सप्ताह मिलाजुला रहने वाला है। इस सप्ताह आपको सुख-दुख दोनों समान रूप से मिलेंगे। सप्ताह की शुरुआत में स्वजनों से मनचाहा सहयोग मिलेगा, त्योहार का भरपूर आनंद स्वजनों के साथ लेंगे, किंतु इस दौरान पेट संबंधी दिक्कतें होने की आशंका है। व्यवसाय की दृष्टि से सप्ताह के मध्य का समय आपके लिए उत्तम रहने वाला है।

सिंह इस सप्ताह उन लोगों से सतर्क रहने की आवश्यकता है, जो अक्सर रंग में भंग डालने का काम करते हैं, त्योहार में ऐसे लोगों से दूरी बनाए रखें। समाजसेवा या राजनीति से जुड़े हुए लोगों के लिए सप्ताह के उत्तरार्ध का समय थोड़ा चुनौती भरा रह सकता है। इस दौरान आस-पड़ोस के लोगों से विवाद होने की आशंका है।

कन्या इस सप्ताह के पूर्वार्ध में सोचे हुए कार्यों को पूरा करने में सफलता मिलेगी, त्योहार का आनंद परिवार और मित्रों के साथ मिलेगा। सप्ताह के मध्य में भूमि-भवन से जुड़े विवाद को दूर करने के लिए अधिक भाग-दौड़ करनी पड़ सकती है। इस दौरान आपकी मानसिक शांति भंग होगी और मन दूसरों के प्रति शंकालू बना रहेगा।

तुला इस सप्ताह ज्यादातर समय परिवार और घर के बुजुर्ग लोगों के साथ बिताएंगे जिससे त्योहार का भरपूर आनंद मिलेगा। यदि आप नौकरीपेशा व्यक्ति हैं तो आपको अपना काम किसी दूसरे के भरोसे छोड़ने की बजाय स्वयं बेहतर तरीके से करने का प्रयास करना चाहिए।

वृश्चिक इस सप्ताह के प्रारंभ में पैतृक स्थान पर जाने का अवसर मिल सकता है जिससे आप स्वजनों के साथ त्योहार के खुशियां बांटने में व्यस्त रहेंगे इससे आपको मानसिक शांति महसूस होगी। इस दौरान आपको धार्मिक-आध्यात्मिक कार्यों में सहभागिता करने का अवसर प्राप्त हो सकता है।

धनु यह सप्ताह शुभता भरा रहेगा। सप्ताह की शुरुआत परिवार, बच्चों और जीवनसाथी के साथ खुशियों भरे माहौल होगी जिससे त्योहार का आनंद कई गुना बढ़ जाएगा। सप्ताह के पूर्वार्ध में कार्यों को समय पर बेहतर तरीके से करने को लेकर उत्साह, उमंग तथा पुरुषार्थ शक्ति बनी रहेगी। इस दौरान नौकरीपेशा लोगों की अतिरिक्त आय के नए स्रोत बनेंगे।

मकर यह सप्ताह मनचाहा फल देने वाला साबित होगा। यदि आप बीते लंबे समय से किसी कार्य विशेष में सफलता पाने के लिए प्रयासरत थे तो आपको इस सप्ताह उससे जुड़ी अच्छी खबर सुनने को मिल सकती है। सोचे हुए काम समय पर पूरे होने के कारण इस पूरे सप्ताह आपका पराक्रम बढ़ा-चढ़ा रहने वाला है।

कुंभ इस सप्ताह परिवार और मित्रों के साथ अच्छा समय बिताएंगे। त्योहार में पैतृक स्थान पर जाने का योग बन सकता है। आपके विरोधी सक्रिय रहेंगे, लेकिन सुखद पहलू यह है कि किसी भी कठिन परिस्थिति में न सिर्फ सीनियर, बल्कि जूनियर सहकर्मी आपके साथ खड़े नजर आएंगे। धन का लेन-देन और खर्च खूब सोच-समझकर कर करना चाहिए।

मीन इस सप्ताह की शुरुआत अच्छी रहेगी। परिवार के सदस्यों के साथ त्योहार का भरपूर आनंद लेंगे। सप्ताह के पूर्वार्ध में किसी बात को लेकर मन में एक भय अथवा चिंता बनी रहेगी। इस दौरान बेवजह के खर्च के कारण आर्थिक चिंता भी सताएगी। कारोबार की दृष्टि से सप्ताह के पूर्वार्ध के मुकाबले उत्तरार्ध का समय ज्यादा शुभता लिए रहने वाला है।

वर्ग पहेली (काकुरो)

काकुरो पहेली वर्ग पहेली के समान हैं, लेकिन अक्षरों के बजाय बोर्ड अंकों (1 से 9 तक) से भरा है। निर्दिष्ट संख्याओं के योग के लिए बोर्ड के वर्गों को इन अंकों से भरना होगा। आपको दी गई राशि प्राप्त करने के लिए एक ही अंक का एक से अधिक बार उपयोग करने की अनुमति नहीं है। प्रत्येक काकुरो पहेली का एक अनूठा समाधान है।

काकुरो 75

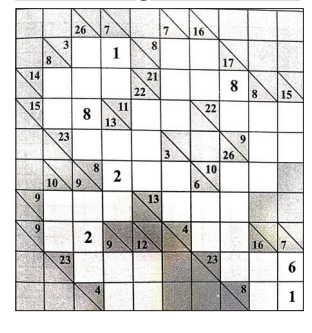

काकुरो 74 का हल

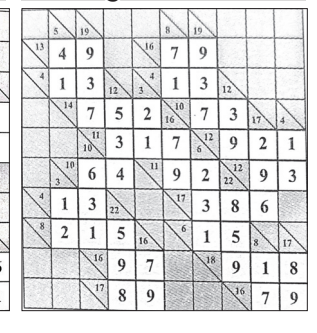

सुल्ताना डाकू: भारत का रॉबिनहुड

यदि आप पश्चिमी उत्तर प्रदेश में बिजनौर के क्षेत्र से गुजरे हों तो नजीबाबाद के नाम से भी वाकिफ होंगे। नजीबाबाद में एक गढ़ (किले) के खंडहर देखे जा सकते हैं। नाम है- 'पत्थर गढ़ का किला'। कुछ 300 बरस पहले बनने वाला यह किला नवाब नजीबुद्दौला के नाम से इतिहास में दर्ज है।

उन्होंने 1755 ईसवी में इस किले का निर्माण करवाया था। किले और गढ़ इतिहास में प्रशासनिक भवन की हैसियत रखते थे। उनके आसपास प्रायः आबादी बस जाती थी। पत्थर गढ़ के आसपास का आबादी क्षेत्र नजीबाबाद कहलाया। ऐसा नवाब नजीब खां के नाम के असर में हुआ। 'नजीबुद्दौला' उनकी उपाधि थी,जो उन्होंने ढहती हुई मुगल सल्तनत के आखिरी चश्म-ओ-चिराग बहादुर शाह जफर से हासिल की थी। 40 एकड़ विस्तार वाला यह किला लखौरी ईंट और पत्थर की मिलीजुली वास्तु संरचना है। इसके दीवारों की मोटाई (10 फुट) और अन्य वास्तुगत विशेषताएं इसकी मजबूती का बयान देते हैं। कमरे (16×26) फुट की पैमाइश वाले हैं।

सपाट छत, आने-जाने के लिए सीढ़ियां और दो प्रवेश द्वारों वाली यह संरचना बिना किसी अलंब के खड़ी है। इसे सहारा देने के लिए न तो खंभे बनाए गए हैं और न ही लोहे के गाटर लगाए गए हैं। सुरक्षात्मक बुर्ज चौतरफा आच्छादित हैं। गढ़ की दीवार के बाहर बनी परिखा (खाई जिसमें अब मिट्टी भर गई है) गढ़ को किले की समस्त वास्तुगत विशेषताओं से संपन्न करती है। कुआं, तालाब आदि से सज्जित इस गढ़ के तमाम किस्से डाकू सुल्ताना से जुड़ते हैं। आसपास के लोग मानते हैं कि डाकू सुल्ताना ने अपना खजाना इसी गढ़ में छुपाकर रखा था। हालांकि जब खजाने को ढूंढने की कोशिश की गई तो मामला सिफर निकला। इन्हीं किस्सों की वजह से ये जगह 'डाकू सुल्ताना का किला' भी कहलाती है। तकरीबन 100 बरस पहले 14 दिसंबर,1923 को सुल्ताना को नजीबाबाद के जंगल से गिरफ्तार कर लिया गया था। गिरफ्तारी के बाद में उसे हल्द्वानी जेल में रखा गया। नैनीताल की अदालत में उस पर मुकदमा चला। मुकदमे के फैसले में उसे सजा-ए- मौत मुकर्रर हुई। सुल्ताना डाकू जीते-जी किवदंती बन गया था। उससे जुड़े हुए तमाम किस्से लोक में प्रचलित हैं। उसका ताल्लुक बिजनौर-मुरादाबाद क्षेत्र के भांतू समुदाय से था। इस समुदाय के सदस्य (भांतू) अपने आप को मेवाड़ के राजा महाराणा प्रताप का वंशज मानते हैं। मुगल शासक अकबर के साथ होने वाले युद्ध में जब राणा की पराजय हुई तो भांतू पूरे देश में छितर गए।

डॉ. नीलिमा पांडेय
प्रोफेसर, लखनऊ विश्वविद्यालय

अराजक गतिविधियों में संलग्न होने की वजह से औपनिवेशिक काल में उन्हें अपराधी जाति के रूप में चिन्हित किया गया। अंग्रेज सरकार निरंतर उनकी गतिविधियों पर नजर रखती और उनको नियंत्रित करने का प्रयास करती।

ग्राम हरथला (मुरादाबाद) में जन्मे सुल्ताना की मां का मायका कांठ में था। कांठ के भांतू पुनर्वासित थे। इस वजह से सुल्ताना के जीवन के शुरुआती दिन नवदा के 'साल्वेशन आर्मी कैंप' में गुजरे।

17 वर्ष की आयु में वह चोरी-चकारी में लिप्त होता हुआ डकैती की तरफ बढ़ चला। बीहड़ उसकी खैर-ख्वाब बना। बीतते वक्त के साथ उसकी जांबाजी के किस्से मशहूर हो गए और वह एक काल्पनिक किरदार में तब्दील होता चला गया। उसके किरदार की चर्चा इतनी अधिक बढ़ी कि उस पर फिल्म बनी,नाटक और उपन्यास लिखे गए। हिंदुस्तान में तो फिल्म बनी ही हॉलीवुड की एक फिल्म भी उसने अपने नाम कर ली। चूंकि सुल्ताना अपने इलाके के गरीबों का मसीहा माना जाता था लोग उसके लिए मुखबिरी करने को जी-जान से हाजिर रहते थे। उसके पास एक लंबा-चौड़ा गिरोह था जिसके सदस्यों की संख्या 300 अनुमानित है। गिरोह के अनुशासन,वफादारी और जन सहयोग की वजह से लंबे समय तक सुल्ताना को पकड़ पाना पुलिस महकने के लिए टेढ़ी खीर बना रहा। उसकी सफलता का राज उसके व्यक्तिगत कौशल में छिपा था। वह अपने इलाके के चप्पे-चप्पे की जानकारी रखता,मुखबिरों के माध्यम से यथास्थिति पर नजर रखता,अपनी दिलेरी और दबंगई से मुश्किल से मुश्किल हालात में बच निकलता। बहरहाल 14 दिसंबर,1923 को उसे बिजनौर में पकड़ा गया। उसका सुराग उसके ही एक मुखबिर ने पुलिस तक पहुंचाया था। कुछ दिनों बाद 8 जून,1924 को उसे फांसी की सजा सुनाई गई।

द कॉन्फेशन ऑफ सुल्ताना डाकू

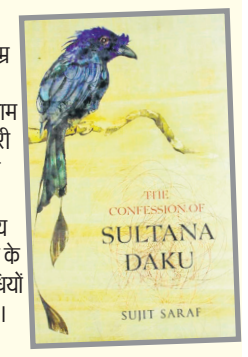

मुरादाबाद के हरथाला गांव में जन्में सुल्ताना डाकू ने 17 साल की उम्र में ही जुर्म की दुनिया में कदम रख दिया था। कुछ ही सालों में उसने ब्रिटिश हुकूमत के अधिकारियों और जमींदार लोगों के बीच अपने नाम का खौफ पैदा कर दिया था। हालांकि अपनी रहम-दिली और दिलेरी के लिए लोग उसे गरीबों का मसीहा भी करार देते थे। 'द कॉन्फेशन ऑफ सुल्ताना डाकू ' सुजीत सर्राफ का ऐतिहासिक उपन्यास है। वस्तुत यह डाकू सुल्ताना का साहसिक और रोमांचक जीवन परिचय है। सुल्ताना की पहचान आधुनिक ऐतिहासिक काल के दुर्दांत डकैत के रूप में है। वह भंतू समुदाय का सदस्य था,जो असामाजिक गतिविधियों (चोरी-डकैती) से अपना जैविकोपार्जन करने के लिए जाने जाते हैं। सन् 1920 ई. के दशक में यूनाइटेड-प्रोविंस (वर्तमान उत्तर प्रदेश) के लोग इस समुदाय के नाम से थर्राते थे। उपन्यास की कथावस्तु डाकू सुल्ताना की हल्द्वानी जेल में कैद के साथ शुरू होती है। दस्तावेज में दर्ज है कि तमाम मशक्कत के बाद अंग्रेज सरकार सुल्ताना को कैद करने में कामयाब हुई थी। बतौर कैदी वह हल्द्वानी (उत्तराखंड) की जेल में रखा गया था। बाद में उसे आगरा स्थानांतरित कर दिया गया। उपन्यास में सुजीत सर्राफ ने सुल्ताना की जबानी उसकी जीवन यात्रा का विवरण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। कथावस्तु में कहा गया है कि फांसी पर चढ़ने से पहले सुल्ताना ने अपने जीवन के किस्से को कलमबद्ध करने की ख्वाहिश जाहिर की। लेफ्टिनेंट कर्नल सैमुअल पियर्सन ने उसकी अंतिम इच्छा का सम्मान रखते हुए उसके द्वारा दी गई सूचनाओं को दर्ज कर लिया। किस्सों-तथ्यों के साथ-साथ यह उपन्यास डकैत का जीवन जीने वाले,प्रायः क्रूर समझे जाने वाले व्यक्ति के मनोभावों, अनुभवों और संवेदना के मार्मिक पक्ष को रेखांकित करता है। यह उतार-चढ़ाव से भरे एक आपराधिक जीवन का दस्तावेज है।

लोकप्रिय संस्कृति में सुल्ताना

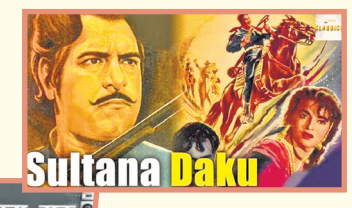

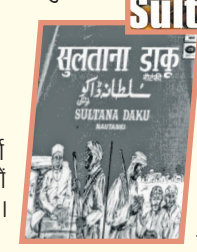

- सन् 1956 में मोहन शर्मा ने जयराम और शीला रामानी को लेकर सुल्ताना डाकू फिल्म बनाई। ये फ़िल्म आर. डी. बैनर्स के तहत बनी।
- सन् 1972 में निदेशक मोहम्मद हुसैन ने सुल्ताना डाकू के ऊपर एक फिल्म बनाई। इसमें मुख्य किरदार दारा सिंह का था।
- हॉलीवुड में सुल्ताना पर बनने वाली फिल्म का नाम 'द लॉन्ग डेविल' है।
- हाथरस के निवासी नथाराम शर्मा गौड ने 'सुल्ताना डाकू उर्फ गरीबों का प्यारा' नाम से किताब लिखी।
- लखनऊ के अकील पेंटर ने 'शेर ए बिजनौर : सुल्ताना डाकू' शीर्षक से किताब लिखी। इस किताब की खासियत ये है कि इसकी कथावस्तु को आधार बनाकर तमाम नाटक और नौटंकी लिखे गए जिनका मंचन उत्तर प्रदेश और बिहार में दशकों तक जारी रहा।
- मोहम्मद अहमद मूडी ने सुल्ताना डाकू के ऊपर एक उपन्यास लिखा। मोहम्मद पाकिस्तान के बाशिंदे हैं।
- सन् 2009 में पेंगुइन से "कन्फेशन का सुल्ताना डाकू" नाम का एक उपन्यास प्रकाशित हुआ। इसके लेखक सुजीत सराफ हैं।
- 'कन्फेशन ऑफ सुल्ताना डाकू' उपन्यास की शुरुआत में लेखक ने सुल्ताना डाकू को फांसी दिए जाने से ठीक पिछली रात का जिक्र किया है। उपन्यास में सुल्ताना को एक अंग्रेज अफसर लेफ्टिनेंट कर्नल सैमुअल पीयर्स के सम्मुख स्वीकारोक्ति करता हुआ दिखाया गया है।
- सुल्ताना कर्नल को बताता है कि चूंकि उसका ताल्लुक एक गरीब परिवार से था, उसकी मां और उसके दादा ने उसे नजीबाबाद के किले में भेज दिया, जहां मुक्ति फौज यानी साल्वेशन आर्मी का कैंप चलता था।
- इस कैंप में सुल्ताना और अन्य भांतुओं को धर्मांतरण कर ईसाई बनाने के अनेक प्रयास किए गए। वहां के माहौल से तंग आकर सुल्ताना कैंप से भाग निकला। कैंप से निकलने के बाद उसका आपराधिक जीवन आरंभ हुआ।
- धीरे-धीरे वह अपराध की दुनिया का बेताज बादशाह बन गया। ये उपन्यास सन् 2009 में पेंग्विन से प्रकाशित हुआ।

इतिहास के झरोखे से

पंचाल राज्य का गौरवशाली इतिहास

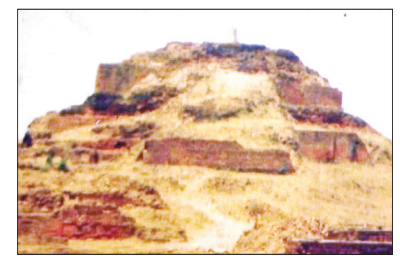

प्रो. गिरिराज नन्दन
इतिहासकार, आंवला, बरेली

अहिच्छत्र में जैन धर्म

अहिच्छत्र जैन धर्म का भी बहुत बड़ा केन्द्र रहा है। विविध तीर्थकल्प नामक जैन ग्रंथ में अहिच्छत्र के संबंध में लिखा है कि कुरु जांगल देश में यह नगर बड़ा समृद्ध था। जब भगवान पार्श्वनाथ यहां तपस्या कर रहे थे तब नागराज धरणेन्द्र एवं उनकी पत्नी ने उनकी कमठ जीव संवर के उपसर्ग से सर्पों का फण बनाकर रक्षा की थी। इसी कारण इसका नाम संख्यावती से अहिच्छत्र हो गया। उस स्थान पर पार्श्वनाथ के मंदिर का निर्माण किया गया। उक्त जैन ग्रंथ में यह भी लिखा है कि इस मंदिर के पूर्व में स्वच्छ जल के सात कुंड थे। भगवान पार्श्वनाथ से पूर्व भी पंचाल नगर अहिच्छत्र में जैन तीर्थंकरों ने तपस्या की तथा धर्म प्रचार किया। इस संदर्भ में उल्लेख मिलता है कि जैन धर्म के प्रथम प्रवर्तक भगवान ऋषभदेव ने अपने सारे राज्य को 52 जनपदों या देशों में विभाजित किया था जिसमें पंचाल भी प्रमुख था। यहां उन्होंने अपने सन्मार्ग के उपदेश देने को भ्रमण भी किया था। जैनधर्म के बाईसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ ने भी अहिच्छत्र में पावन विहार किया था। यहां जब उनका तीर्थ चल रहा था तब अहिच्छत्र के राजा विष्णु गुप्त का जन्म हुआ था। अहिच्छत्र से प्राप्त अवशेषों में भगवान नेमिनाथ की मूर्तियां यहां के मंदिरों में विराज मान थी।

अहिच्छत्र में जैन मंदिर एवं अन्य नग्न जैन मूर्तियां भी प्राप्त हुई हैं। अहिच्छत्र के पश्चिम दिशा में स्थित एक टीला कोटारी खेड़ा की खुदाई में एक शिला मिली थी जिस पर एक लेख खुदा हुआ था- "आचार्य इन्दनन्दिशिष्य महादारिपारास्वपतिस्य कोत्तार" अर्थात् आचार्य इन्द्र नंदि के शिष्य महादारी ने पार्श्वनाथ के इस कोत्तार नाम मंदिर का निर्माण कराया। अहिच्छत्र से जैन तीर्थकर ऋषभदेव की तथा अन्य जैन तीर्थंकरों की ताम्र प्रतिभाएं, जैन तीर्थकर पार्श्वनाथ एवं ऋषभदेव की पाषाण प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं। इस प्रकार इस स्थान के एक जैन तीर्थ होने की मान्यता भगवान पार्श्वनाथ के समय से ही चली आ रही है।

पंचाल निवासी श्रेष्ठ, सचरित्र, सत्यनिष्ठ

ऐसा प्रतीत होता है कि पंचाल में विविध कलाओं तथा काम विज्ञान की भी अच्छी प्रगति हुई। सम्भवत: यहां चिकित्सा द्वारा लिंग परिवर्तन का ज्ञान भी कुछ लोगों को था। द्रुपद के पुत्र शिखंडी का उदाहरण हमारे सामने है। बहुपति प्रथा का भी चलन यहां के एक वर्ग में विद्यमान था, जैसा कि पांचाली द्रौपदी के उदाहरण से ज्ञात होता है,परंतु इससे पंचाल जनपद में चारित्रिक एवं नैतिक दुर्बलता प्रमाणित नहीं होती। वात्स्यायन ने अपने ग्रंथ कामसूत्र में जहां अन्य अनेक जनपदों में प्रचलित कतिपय कुत्सित प्रथाओं का विवरण दिया है। वहां उन्होंने अहिच्छत्रा के निवासियों के विषय में लिखा है कि वेश्याओं के संसर्ग से दूर रहते थे। उन्होंने जिन चौसठ काम कलाओं का अपने ग्रंथ में वर्णन किया है। उसने चौसठवीं कला पाचालिका लिखी है-पांचालिका च चतु: षष्टिकला।

उत्तर पंचाल जनपद की समृद्धि तथा यहां के सच्चरित्र निवासियों का उल्लेख प्राचीन साहित्य एवं ह्वेनसांग के यात्रा-विवरण में मिलता है। बौद्ध ग्रंथों में उत्तर पंचाल के लिए बहुत समृद्ध, धनधान्य पूर्णतया घना बसा हुआ जनपद कहा है। ह्वेनसांग ने अपने यात्रा विवरण में अहिच्छत्र के निवासियों के संबंध में लिखा है कि धार्मिक एवं सत्यनिष्ठ थे। उस समय इस नगर में हिन्दू एवं बौद्ध धर्म साथ-साथ उन्नति कर रहे थे।

पंचाल के विद्वान एवं साहित्य

वैदिक साहित्य में पंचाल के कतिपय उद्भट विद्वानों के नाम भी मिलते हैं-पंचाल चंड, प्रवाणजेबलि, शलिक शलावत्य, चैकितायन दालभ्य, द्रोण, बाभ्रव्य गालव आदि विद्वान एवं तत्ववेत्ता इसी जनपद के निवासी थे। इनमें से कई विद्वान अपने समय के महान दार्शनिक थे।

प्रवाहण जैवलि से तत्वज्ञान की उच्च शिक्षा अनेक विद्वानों ने प्राप्त की। कामसूत्र के लेखक वात्स्यायन के अनुसार पंचाल के बाभ्रव्य द्वारा ऋग्वेद का विभाजन आठ अष्ठकों में किया गया। प्रत्येक अष्टक में आठ अध्याय थे। वात्स्यायन ने यह लिखा है कि स्वयं उनका कामसूत्र पंचाल के निवासी बाभ्रव्य द्वारा रचित कामशास्त्र के एक विशाल ग्रंथ के आधार पर लिखा गया। बाभ्रव्य का यह ग्रंथ 140 अध्यायों में था और 9 विभागों में बंटा हुआ था। पंचाल प्रदेश में प्राचीन काल में साहित्य रचना अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई थी। गोपथ, शतपथ, ऐतरेय, मैत्रीपणि संहिता, काठक संहिता, शांखायन अरण्यक, छान्दोग्य उपनिषद, बृहदारण्यकोपनिषद, जैमिनीय ब्राह्मण आदि ग्रंथों में पंचाल प्रदेश और उनके शासकों की बहुदा चर्चा मिलती है। इससे प्रतीत होता है कि पंचाल प्रदेश में ही उन महान ग्रंथों की रचना हुई है। क्योंकि ग्रंथकार अपने समय और निकट स्थान की चर्चा प्रायश: अपने ग्रन्थ में किया करता है। इससे अनुमान होता है कि पंचाल प्रदेश के शासकों की छत्र छाया में रहकर ही ब्रह्मज्ञान के अमूल्य ग्रन्थ रत्न इसी प्रदेश में निर्मित हुए हैं। इसी विद्या के कारण भारत महान एवं जगद्गुरु कहलाया। बौद्ध ग्रन्थ महा उम्मग्ग जातक ग्रन्थ से ज्ञात होता है कि पंचाल के राजा ब्रह्मदत्त ने अपनी अद्वितीया सुन्दरी पुत्री पांचाली चंडी के सौंदर्य का काव्य मय वर्णन करने के लिए राज्य के योग्यतम विद्वान और कवियों को निमंत्रित किया था। उन्होंने राजकुमारी के विषय में ललित और मधुर भाषा युक्त काव्यों की रचनाएं कीं। इन रचनाओं को मिथिला के राजा ने सुना और वह राजकुमारी पांचाल चण्डी के अनुपम सौन्दर्य के प्रति आकृष्ट हो गया।

प्रतिहार वंशीय राजा भोज की राजसभा में विद्यमान राजकवि राज शेखर ने लिखा है कि उनकी रचनाएं ललित, मधुर और कर्णप्रिय हैं। पंचाल देश के कवियों की काव्य पाठ प्रणाली सर्वोत्कृष्ट है। राजशेखर ने पंचाल निवासियों की नेपथ्य विधि का उल्लेख भी किया है जिससे ज्ञात होता है कि पंचाल में नाट्य कला का अच्छा प्रचार था।

मौलाना हसरत मोहानी की होली

मौलाना हसरत मोहानी का राजनीति व आजादी की लड़ाई में अहम रोल रहा। वह कांग्रेसी,कम्युनिस्ट, और लीग सभी में समान रुप से सहभागी रहे थे। मौलाना हसरत मोहानी की जिदंगी में तीन एम बड़े ही महत्वपूर्ण व लोकप्रिय थे,उनमें से एक एम से मक्का, दूसरा एम से मथुरा और तीसरा एम से मास्को। इन तीनों एम को मौलाना अपने जीवन में आत्मसात किए हुए थे। तभी तो मथुरा की मोहब्बत का ही नतीजा था उनका श्रीकृष्ण प्रेम। मौलाना हसरत मोहानी के शब्दों में .....

अनूप कुमार शुक्ल
महासचिव इतिहास समिति, कानपुर

मथुरा नगर है
आशिकी का, दम भरती है आरजू उसी का।/ हर जर्रा सर जमीने गोकुल, वारा है जमाले दिलवरी का।।

भगवान श्रीकृष्ण की होली मौलाना के शब्दों में... मोपे रंग न डार मुरारी,विनती करत हूं बिहारी/ पनिया भरन का जाय न देहै,श्याम भरी पिचकारी/थर थर कांपत लाजन,हसरत देखत हैं नर-नारी। काजी अदील अब्बासी ने मौलाना हसरत मोहानी की होली का एक दिलचस्प वाक्या लिखा- "एक दिन मैंने देखा कि होली के दिन रंगीन कपड़े पहने घूम रहे थे। मैंने मौलाना से कहा, - मौलाना यह क्या? उन्होंने फरमाया कि भाई डाक्टर मुरारीलाल रोहतगी जी की पत्नी ने रंग डाल दिया। खैर यह घटना तो किसी के साथ भी हो सकती थी,लेकिन मौलाना दो-तीन दिन तक वह रंगीन कपड़े पहने रहे और उन्हीं कपड़ों में नमाजे भी पढ़ते रहे।"

बैक्ट्रिया के राजा ने जारी किए थे श्रीकृष्ण के सिक्के

डॉ पवन विजय
एसोसिएट प्रोफेसर, जौनपुर

बैक्ट्रिया का राजा था, अगाथोक्लीज आज से लगभग 2200 वर्ष पहले उसने भगवान कृष्ण के सिक्के जारी किए जिसमें भगवान शंख और चक्र के साथ हैं। उसने कृष्ण से संबंधित अन्य सिक्के भी जारी किए जिसमें वह मिट्टी खाने के बाद माता को अपने मुंह के अंदर ब्रह्मांड का दर्शन करा रहे हैं, बलराम को हल लिए सिक्के वह जारी करता है, महालक्ष्मी के सिक्के जारी करता है।

वह यवन राजा भारतीय परंपरा और लोक प्रचलित कहानियों से भिज्ञ है। इसका मतलब कृष्ण की कथा ग्रीस के भी लोकमानस में व्याप्त होगी। कथाओं का संचरण एक दिन में होता नहीं है उसके लिए हजारों वर्ष के प्रभाव प्रवाह तंत्र की आवश्यकता होती है। कृष्ण की लीलाओं का ताप इतना अधिक था कि विश्व का प्रत्येक समाज उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। भारत से बाहर मिले सिक्के इस बात के प्रमाण हैं। मुझे इस बात की हैरानी होती है कि आदम और उनके परवर्ती कहानियों के कोई प्रमाण क्यों नहीं मिलते?

अयोध्या में आदम के लड़के शीश की कब्र है,जनहित में सरकार को वहां की खुदाई करनी चाहिए ताकि तर्क शास्त्री,विज्ञानवाद के समर्थक और प्रगतिशील लोग यह जान सकें कि कब्र कितनी पुरानी है और उसके अंदर कुछ है भी या केवल कल्पना की उपज है,जो भी होगा सत्य का अन्वेषण होना चाहिए। बहरहाल भगवान कृष्ण को लेकर वामपंथियों का एक अलग राग है जिसमें वे कृष्ण को असुर बताते हैं। वस्तुतः कृष्ण के समय में एक खुराफाती व्यक्ति था, उसका नाम पौंड्रक था,वह कृष्ण का भेस बनाकर लोगों से अपनी पूजा करवाता था। एक दिन उसे यह अहंकार हो गया कि अपुनिच भगवान है और लोगों से खुद को भगवान मनवाने के लिए हिरण्यकशिपु जैसा अत्याचार करने लगा तो अहंकार को खाने वाले कृष्ण ने उसका वध कर दिया।

वैज्ञानिक चेतना के साथ जो मानवीय भावों के उच्चतम उदाहरण हैं, उनका नाम श्रीकृष्ण है। नगरों के नव निर्माण की शुरुआत भगवान कृष्ण ने की जिसमें मथुरा, इंद्रप्रस्थ, द्वारका शामिल है। एक आर्किटेक्चर, संगीतज्ञ, दार्शनिक, योगी, योद्धा, वैज्ञानिक और कुशल खिलाड़ी के रूप में संसार का कोई पूर्ण पुरुष है तो वह श्रीकृष्ण ही हैं।

मदनोत्सव: काम कुंठाओं से मुक्त होने का उत्सव

मानव प्रारंभ से ही उत्सवप्रिय प्राणी रहा है,जो खुशियां मनाने और इन खुशियों के आदान-प्रदान का कोई भी मौका चूकना नहीं चाहता था। सभ्यता के शुरुआत से ही अपनी उत्सवप्रियता को प्रकट करने के लिए वह कुछ न कुछ ऐसे उपादानों को भी ढूढ़ लिया था,जो आज भी हजारों-हजार सालों का समय व्यतीत करने के बावजूद अपनी निशानियां अमिट बनाए हुए हैं।

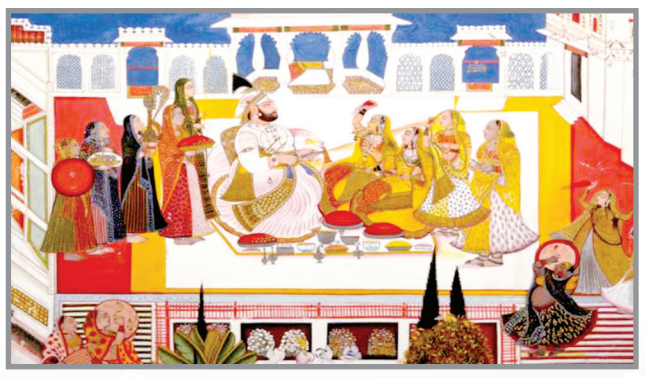

मदनोत्सव काम कुंठाओं से मुक्त होने का प्राचीन उत्सव है जिसका प्रत्यक्ष दर्शन हम आज भी अपने प्राचीन बौद्ध कला और प्राचीन मंदिरों के बाहरी दीवारों पर कर सकते हैं। हमारे धार्मिक ग्रंथों में ऐसा उल्लेख है कि बसंत पंचमी के दिन ही कामदेव और रति ने पहली बार मानव हृदय में प्रेम और आकर्षण का संचार किया था तभी से इस दिन को मदनोत्सव या वसंतोत्सव के रूप में मनाया जाने लगा,जो एक महीने तक चलता है। इसका समापन होली के उल्लास के साथ होता है।

डॉ. अंकित जायसवाल
गोरखपुर

मदनोत्सव का उल्लेख कालिदास ने अपने ग्रंथ "ऋतुसंहार" के छठे सर्ग में किया है। कालिदास लिखते हैं कि इस मौसम में कामदेव स्त्रियों की मदमाती आंखों की चंचलता में, उनकी गालों में पीलापन लिए,कमर में गहरेपन के साथ उनकी नितंबों में मोटाई के रूप में समा जाते हैं। काम से स्त्रियां अलसा जाती हैं। इस मद से बोलना और चलना भी कठिन हो जाता है। संस्कृत के ही एक नाटक में "कामदेवानुमान उत्सव" की चर्चा मिलती है। इस उत्सव में कामदेव का जुलूस निकाला जाता था। भवभूति के ग्रंथ "मालती माधव" में भी मदनोत्सव की चर्चा की गई है। यहां मध्य भाग में कामदेव का मंदिर बनाया जाता था।

वात्सायन के "कामसूत्र" में जीवन में काम के महत्व को अत्यंत ही शिष्ट और रोचक तरीके से चित्रित किया गया है। कामशास्त्र में सुवसंतक नाम के उत्सव का भी जिक्र मिलता है।

गुप्तकालीन एक अन्य ग्रंथ शूद्रक के मृच्छकटिकम नाटक में नायिका वसंत सेना ऐसे ही एक जुलूस में भाग लेती नजर आती है। ऐतिहासिक ग्रंथ हर्षचरित में भी मदनोत्सव का उल्लेख मिलता है।

कश्मीर के शासक जयापीड (779 से 812 ई.) के प्रधानमंत्री का रचित एक ग्रंथ है "कुट्टनीमतम"। इसमें वेश्याओं को कामशास्त्र की शिक्षा देने वाली नारी को "कुट्टनी" कहा गया है। इसमें वेश्याओं द्वारा मदनोत्सव मनाने का जिक्र किया गया है। भविष्य पुराण में वसंत के दौरान कामदेव व रति के मूर्तियों की स्थापना तथा उनकी पूजा-अर्चना करने का वर्णन मिलता है। वसंत के मौसम का साहित्यिक श्रृंगार करने लिए प्राचीन लेखकों ने इसे कामदेव के पंचसर शब्दों से सुशोभित किया:- शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध। ये पांचों इन दिनों प्रकृति की छटा में समाए रहते हैं। ऐसा साहित्यिक विवरण मिलता है कि वसंतोत्सव/मदनोत्सव के एक महीने के उत्सव के दौरान युवक-युवतियां अपने मनपसंद जीवनसाथी का चुनाव करते हैं,जिसे तत्कालीन समाज मान्यता भी देता था। प्राचीन साहित्य के अनुसार मदनोत्सव के समय रानियां सभी आभूषणों से सुसज्जित होकर पैरों में महावर लगाकर अशोक वृक्ष पर अपने बाएं पैर से हल्का आघात करती थीं जिससे अशोक के पुष्प खिल उठते थे, इस क्रिया का एक विशेष नाम "अशोक दोहद" के रूप में मिलता है। चारों ओर वसंत और कामोत्सव कि दुदुंभी बज उठती थी। भारतीय धर्मशास्त्रों में प्रेम को काफी सहज, सरल व समर्पित रूप में प्रस्तुत किया गया है। शारिरिक सुख से ज्यादा इसे मन की भावना से संबंधित रखा गया है। ठंड की विदाई के साथ वसंत आगमन होने पर मदनोत्सव मनाया जाना कहीं न कहीं प्राचीन आदिम/प्रागैतिहासिक मानव के क्रियाकलापों का ही विकसित रूप है,जो हम पाषाणकालीन शैलचित्रों के माध्यम से देखते हैं।

वसंतोत्सव माघ महीने के शुक्ल पक्ष की पंचमी से प्रारंभ होकर होली पर्व के उल्लास के साथ समाप्त होती है। वसंत ऋतु का यह प्राचीन मदनोत्सव ही पूर्व मध्यकाल और मध्यकाल तक आते-आते होली के रूप में विकसित हुआ है जिसकी कथाएं पुराणों में हिरण्यकशिपु और उसकी बहन होलिका तथा प्रह्लाद से संबंधित है। मध्ययुगीन कृष्ण-लीलाओं का साहित्य तो होली के रंगों से भरा पड़ा है,आज भी वृंदावन और बरसाने की लट्ठमार होली विशेष है। इसमें भी स्त्री और पुरुष के शिष्ट कामयुक्त प्रेम को विशेष स्थान दिया जाता है। प्राचीन भित्तिचित्रों और मंदिरों के दीवारों पर भी इस उत्सव के दृश्य दिखाई पड़ते हैं जिसमें विशेष है-विजयनगर के हंपी का एक चित्रफलक जो सोलहवीं सदी का है,इसमें होली का मनोरम दृश्य उकेरा गया है। इसमें राजदंपति, राजकुमार और राजकुमारियों सहित दासियों संग पिचकारियों से होली खेल रहे हैं। इसी समय का एक चित्र अहमदनगर का है जिसमें "वसंत-रागिनी" मनाया जा रहा है, जो होली का ही एक रूप है। इसमें झूले के साथ नृत्य-गीत और पिचकारियों का वर्णन है। मेवाड़ के एक कलाकृति में वहां के तत्कालीन राणा दरबारियों के साथ चित्रित हैं, जहां दरबार के बीचो-बीच रंगों का कुंड रखा गया है और नृत्यांगना नृत्य पेश कर रही है। बूंदी कला के अंतर्गत एक चित्र में राजा हाथी दांत के सिंहासन पर बैठा है जिसके गालों पर महिलाएं गुलाल लगा रही हैं।

अलबरूनी ने भी अपने "किताब-उल-हिन्द" में चैत्र पूर्णिमा के वहंद(वसंत) उत्सव का जिक्र किया है,जो महिलाओं का त्योहार है। इस दिन महिलाएं खूब सज-संवर के आभूषणों से सुसज्जित होकर अपने पतियों से उपहार प्राप्त करती हैं। अलबरूनी का यह वर्णन उस कामोत्सव/मदनोत्सव के दौरान स्त्री-पुरुष के बीच के प्रेम संबंधों को पुख्ता करता है,जो हमारे प्राचीन साहित्यकारों ने लिख छोड़ा है।

इसके बाद आने वाले मुस्लिम लेखकों/कवियों ने होली खेलने का जिक्र हिंदू-मुसलमान दोनों वर्गों में बताया है। होली का जिक्र विशेष रूप से अमीर खुसरो, रसखान, नाजिर अकबराबादी, महजूर लखनवी, शाह नियाज आदि की रचनाओं में मिलता है। सल्तनत काल में मोहम्मद बिन तुगलक पहला सुल्तान था जिसने होली खेली। तत्कालीन राजपूताने में भी जमकर होली खेली जाती थी जिसमें धूल और रंगों से आम लोग भी उल्लास मनाते थे। होली के रोचक किस्सों की श्रृंखला मुगल काल में खूब सुनाई पड़ती है, जहां अकबर और उसकी राजपूत पटरानी तथा जहांगीर के साथ नूरजहां होली खेलते मिल जाते हैं। मुगलकाल का एक ऐसा ही चित्र अलवर संग्रहालय में रखा गया है जिसमें जहांगीर को होली खेलते हुए दिखाया गया है। शाहजहां के समय तक होली का एक नया मुगलिया अंदाज सामने आता है जिसे तत्कालीन लेखकों ने ईद-ए-गुलाबी और आब-ए-पाशी (रंगों का बौछार) नाम दिया है। मुगलिया होली अंतिम बादशाह बहादुरशाह जफर तक यात्रा करती है जिन्हें उनके मुस्लिम मंत्री तक रंग लगाते थे। 1857 की क्रांति के दौरान उत्तर प्रदेश में होली के दिन मेले का आयोजन किया गया था और सभी धर्मों के लोगों को अंग्रेजों के विरुद्ध एकजुट होने का आह्वान किया गया था। होली के रंगों से अंग्रेज भी न बच पाए, अंग्रेज अफसर जनरल आक्टोलोनी अपने 13 बीवियों के साथ दिल्ली के कश्मीर गेट पर जश्न मनाते थे, इनके साथ विलियम फ्रेजर और कर्नल स्किनर का परिवार भी फागुन के बयार में मदमस्त होकर रंग खेलते थे। इस समय गुलाल के साथ चारकोल और पोटामिट्टी का प्रयोग होता था। पोटामिट्टी अर्थात् मिट्टी और पानी का कीचड़।

अवध के नवाब वाजिद अली शाह के शासन के दौरान संयोग से होली और मुहर्रम एक ही दिन पड़ गए। होली हर्षोल्लास का मौका होता है,जबकि मुहर्रम मातम का दिन, ऐसे में हिंदुओं ने मुसलमानों की भावनाओं की कद्र करते हुए उस साल होली न मनाने का फैसला किया,इस बात का पता जब नवाब वाजिद अली शाह को मिली तो उन्होंने कहा कि चूंकि हिंदुओं ने मुसलमानों की भावनाओं का सम्मान किया है। इसलिए अब मुसलमानों का फर्ज है कि वो भी हिंदुओं की भावनाओं का सम्मान करें। नवाब वाजिद अली शाह ने इसके बाद घोषणा करवाकर सबको सूचित किया कि पूरे अवध में उसी दिन होली मनाई जाएगी। खास बात है कि वो खुद इस होली में हिस्सा लेने पहले ही पहुंच गए। नवाब वाजिद अली शाह की ही यह प्रसिद्ध ठुमरी है- 'मोरे कन्हैया जो आए पलट के, अबके होली मैं खेलूंगी डटके उनके पीछे मैं चुपके से जाके, रंग दूंगी उन्हें भी लिपटके'। वाजिद अली शाह के भी पहले जब मशहूर शायर मीर दिल्ली से लखनऊ आए तो उन्होंने तत्कालीन नवाब आसफुद्दौला को होली के उल्लास में इतना खोया हुआ देखकर तुरंत इस पर एक काव्य रच दिया।